# मंथन

ग्राम-पुनर्रचना परिशिष्टांक

## ग्राम-विकास
## के
## कुछ प्रयोग
## कुछ अनुभव

दीनदयाल शोध संस्थान की त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष ३ अंक ४ वैशाख विक्रमाब्द २०३८ (अप्रैल १९८१)

Seas ...

ces :
THE CONTINENT
GLADESH
CK SEA &
EAN PORTS
INDIAN COAST

CO., LTD.
HOUSE ST., CALCUTTA-1
Ports.

# मंथन

## दीनदयाल शोध संस्थान की पत्रिका

ग्राम-पुनर्रचना
परिशिष्टांक
१९८१

वर्ष ३ अंक ४ वैशाख विक्रमाब्द २०३८ (अप्रैल १९८१)

निर्मन्थध्वमतन्द्रिताः (श्रीमद्भागवत ८-६-२३)

**निरालस्य होकर मंथन करो**

**सम्पादकीय परामर्श-परिषद्**

डा० वी० एम० दाण्डेकर
डा० आर० आर० दिवाकर
डा० लक्ष्मीमल्ल सिंधवी
डा० विश्वनाथ प्रसाद वर्मा
डा० शिशिर कुमार घोष
श्री जैनेन्द्र कुमार
डा० गोविन्दचन्द्र पाण्डेय
डा० आत्माराम
प्रो० खालिक अहमद निजामी
डा० दामोदर प्रसाद सिंहल
श्री दत्तोपन्त ठेंगड़ी
प्रो० के० आर० श्रीनिवास आयंगर
डा० एस० भगवन्तम
श्री यादवराव

**सम्पादक**

देवेन्द्र स्वरूप

**कार्यालय**

**दीनदयाल शोध संस्थान**

७-ई, स्वामी रामतीर्थ नगर,
नई दिल्ली-११००५५

**शुल्क**

एक प्रति रु० ५.००
वार्षिक :-
भारत, पाकिस्तान, बंगलादेश, श्रीलंका रु० २०.००
एशिया अफ्रीका एवं यूरोप
(वायु मार्ग से) £ ७.००
अमेरिका, कनाड़ा और द० अमेरिका
(वायु मार्ग से) $ १३.००

## इस अंक में


| | | |
|---|---|---|
| **गांधी निकेतन**<br>कल्लुपट्टी (तमिलनाडु) | ११ | गांधीवादी शैली का एक सफल प्रयोग<br>**(के० मुरियाण्डी)** |
| **विलेज रिकन्स्ट्रक्शन ग्रार्गेनाइजेशन**<br>(हैदराबाद) | १३ | विपत्ति में विकास का अवसर<br>**(प्रो. एम. ए. विंडे व प्रो. ग्रार. वी. कोल्हटकर)** |
| **ग्राम सेवा समिति**<br>होशंगाबाद जिला, (म० प्र०) | १५ | इच्छा शक्ति और समग्र दृष्टि का अभाव<br>**(बनवारी लाल चौधरी)** |
| **बाल कल्याण समिति**<br>हरिद्वार (उत्तर प्रदेश) | १६ | गुटबन्दी का घुन कैसे दूर हो?<br>**(एन. के. पालीवाल)** |
| **इंस्टीच्यूट फार मोटिवेटिंग सेल्फ एंपलायमेंट**<br>कलकत्ता | २१ | निहित स्वार्थों से टकराव<br>**(विप्लब हलीम)** |
| | २२ | डालमिया सीमेंट की ग्राम विकास परियोजनाएं |
| **जन कल्याण समिति**<br>सीकर (राजस्थान) | २३ | समस्याओं में कैद ग्रामीण-चेतना<br>**(बदरी नारायण सोडाणी)** |
| **सर्वोदय सेवा समिति**<br>क्योंझर (उड़ीसा) | २६ | वनवासी संस्कृति मिटे नहीं<br>**(पी. के. पटनायक)** |
| **वेरला डेयरी प्रकल्प समिति और ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाएं समिति**<br>सांगली (महाराष्ट्र) | २७ | कर्म में से उपजा विकास का दर्शन<br>**(वी. एन. देश पांडे)** |
| **जन शिक्षा प्रचार केन्द्र**<br>(प० बंगाल) | २६ | समग्र ग्राम विकास का एक प्रयास |
| **हरिजन सेवक संघ**<br>हावड़ा (बंगाल) | ३१ | उपेक्षितों का उत्थान<br>**(शंकर कुमार सान्याल)** |
| **महात्मा गांधी सेवाश्रम**<br>जौरा (म० प्र०) | ३३ | चंबल की खौफनाक घाटियों में<br>**(एस. एन. सुब्बाराव)** |
| **कर्नाटक खादी ग्रामोद्योग संयुक्त संघ**<br>बेनगरी (हुबली) | ३५ | खादी और ग्रामोद्योग : क्रान्ति का मार्ग<br>**(वी. टी. मागदी)** |

| | | |
|---|---|---|
| **लोक सेवा समिति**<br>जि० मिदनापुर (बंगाल) | ३६ | पहले लोगों को बदलना होगा<br>**(गोकुल चंद विश्वास व अमिय कुमार राय)** |
| पर्वतीय युवा मंच | ३७ | उत्तराखण्ड : प्राकृतिक सम्पदा खतरे के कगार पर **(शमशेर सिंह विष्ट)** |
| **वीकर कम्युनिटीज एक्शन फॉर डेवलपमेंट एंड लिबरेशन** | ३६ | जमींदारों के चंगुल से आत्म-निर्भरता की ओर<br>**(सी. फ्रांसिस)** |
| | ४३ | अनौपचारिक शिक्षा एवं विकास कार्य<br>**(कमला चौधरी)** |
| **चर्च आफ साऊथ इन्डिया**<br>साउथ केरल | ४७ | समस्याओं को हमने देखा, तह में जाकर<br>**(एम. जे. विलसन)** |
| **एशियन इंस्टीट्यूट फार रूरल डवलपमेंट**<br>बंगलौर | ४९ | सरकारी ढांचे में बदलाव की जरूरत<br>**(डा. के. सी. नाइक)** |
| **क्रिश्चियन चिल्ड्रंस फंड**<br>नई दिल्ली | ५१ | भारतीय बच्चों के विदेशी अभिभावक<br>**(सनी वर्गीस)** |
| **यंग इण्डिया प्राजेक्ट**<br>पेनुकोंडा (आन्ध्र प्रदेश) | ५५ | वर्ग-संघर्ष के लिए संगठन<br>**(नरेन्द्र बेदी)** |
| **एमन्युअल हॉस्पिटल एसोसिएशन**<br>नई दिल्ली | ५७ | रोगी को दवा से अधिक प्यार चाहिए<br>**(लाल चुंबागलियाना)** |
| **कृषि ग्राम विकास केन्द्र**<br>रांची (बिहार) | ५९ | भिक्षावृत्ति नहीं, पुरुषार्थ जगाना है<br>**(एम. डी. खेमका)** |
| **भगवतुल चैरिटेबल ट्रस्ट**<br>(आंध्र प्रदेश) | ६१ | सफलता का राज : जन-सहभाग<br>**(वी. पी. परमेश्वर राव)** |
| **समग्र विकास परिषद्**<br>बलियापाल (उड़ीसा) | ६३ | सामूहिक प्रयास से आत्म निर्भरता की ओर<br>**(गोलन बिहारी राय)** |
| एक्सेल इन्डस्ट्रीज, बम्बई | ६५ | विध्वंस में सृजन का स्वर<br>**(के. सी. श्राफ)** |
| **ग्राम विकास केन्द्र** (टाटा उद्योग)<br>(जमशेदपुर) | ६७ | इस्पातनगरी गांव की ओर<br>**(एच. एस. वर्मा)** |

| | | |
|---|---|---|
| **दि सोशल वर्क एंड रिसर्च सेन्टर** जगजीत नगर (हि० प्र०) | ६९ | नौकरशाही कैसे काम करती है ? **(सुभाष मेंबापुरकर)** |
| नागपुर कृषि महाविद्यालय | ७२ | कृषि युवा क्लबों का अभिनव प्रयोग **(डा. एस. पी. सुपे)** |
| **दि वालंटरी हैल्थ सर्विसेज सेन्टर** मद्रास | ७३ | लघु स्वास्थ्य केन्द्रों का सफल प्रयोग **(के. एस. संजीवी)** |
| **रूरल एग्रीकल्चर इंस्टीच्यूट** नारायण गांव (महाराष्ट्र) | ७५ | हमारे कुछ सफल प्रयोग **(एस. ग्रार. सबनीस)** |
| **इंडियन इंस्टीच्यूट फॉर रूरल वर्कर्स** औरंगाबाद (महाराष्ट्र) | ७६ | ग्रामीण युवा पढ़ाई क्यों छोड़ देते हैं ? **(विजेन्द्र काबरा)** |
| भारत सरकार | ७९ | नीलोखेड़ी : सामुदायिक विकास योजना का प्रथम प्रयोग **(राष्ट्र प्रकाश)** |
| **इण्डो डच प्रोजेक्ट फॉर चाइल्ड वेल्फेयर** हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश) | ८१ | जनशक्ति का क्रियात्मक योगदान आवश्यक **(डा. एच. डबल्यू. बट्ट)** |


## पाठक बन्धुओ

मन्थन के ग्राम-पुनर्रचना विशेषांक में वर्ष ३ के दो सामान्य अंकों (२ और ३) का समावेश कर लिया गया था। अत: अब आपके पास वर्ष ३ का चौथा अंक (अप्रैल, १९८१) भेजा जा रहा है !

**व्यवस्थापक 'मन्थन'**

# ग्राम-पुनर्रचना कर्म की कसौटी पर

मन्थन का ग्राम-पुनर्रचना विशेषांक आपकी दृष्टि से अब तक गुजर चुका होगा। इस विशेषांक के माध्यम से "ग्राम-पुनर्रचना" के लिये जीवन दर्शन खोजने का एक विनम्र प्रयास किया गया था। बौद्धिक धरातल पर अनेक मौलिक प्रश्न उठाये गये थे : ग्राम-पुनर्रचना का अर्थ क्या है? गाँवों को पिछड़ा हुआ मानकर उन्हें आधु-यन्त्र-सभ्यता के प्रवाह में खींच लाना अथबा इस यन्त्र-सभ्यता के स्वस्थ विकल्प की खोज की प्रयोगशाला बनाना? इस यन्त्र सभ्यता की आन्तरिक व्याधियाँ व व्यथायें क्या है? उसके भविष्य के बारे में भारत एवं पश्चिम के श्रेष्ठ मनीषियों के विचार क्या हैं? इन प्रश्नों की कड़ी में ही हमने उस विशेषांक में विभिन्न मनीषियों के शब्दों में आदर्श ग्राम के कुछ कल्पना-चित्र भी उभारने की कोशिश की थी। ग्राम-पुनर्रचना के नाम पर चल रहे विभिन्न सरकारी प्रयासों की व्यापकता का एक विहंगम चित्र भी प्रस्तुत किया गया था। किन्तु यह सब करते समय एक प्रश्न बार-बार हमें भीतर से कोंचता रहा कि ६०-७० वर्ष तक इस विषय पर सतत् बौद्धिक व्यायाम एवं हजारों स्वयंसेवी व सरकारी संस्थाओं प्रयत्नों के बावजूद आदर्श ग्राम का कोई एक नमूना इस विशाल देश के किसी भी कोने में खड़ा हो पाया क्या?

इसी प्रश्न का उत्तर पाने के लिये हमने विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं के ग्राम-पुनर्रचना विषयक अनुभव आमन्त्रित किये थे। इन अनुभवों का अध्ययन करने से स्पष्ट हो सकता है कि विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं का उद्‌गम स्रोत क्या है? उनकी प्रेरणा व जीवन दृष्टि क्या है? उनके वित्तीय एवं अन्य साधनों के स्रोत क्या है? उनकी कार्य-शैली क्या है? उन्होंने किस कार्य क्षेत्र को क्यों चुना? इस बहिरंग जानकारी से भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि वर्षानुवर्ष इस क्षेत्र में कार्य करने का उनका अनुभव क्या रहा? ग्राम्य-जीवन के किस यथार्थ का उन्हें सामना करना पड़ा? किस चित्र को वे खड़ा करना चाहते थे, उसको वे कितने अंशों में पूर्ण कर पाये? कितने अंशों में नहीं? तो क्यों? जिन ग्रामवासियों के कल्याण की कामना से प्रेरित होकर वे गांव में बसे थे उन ग्रामवासियों से उन्हें कितना सहयोग मिला, वे इन प्रयासों को किस दृष्टि से देखते हैं? राष्ट्र निर्माण की ऊँची-ऊँची बातें करने वाले राजनीतिक नेतृत्व एवं दलों का ऐसे रचनात्मक प्रयासों के प्रति क्या रुख रहा है? ग्राम विकास के नाम पर करोड़ों अरबों रुपयों को खाने वाली सरकारी योजनाओं का ग्राम के धरातल पर व्यावहारिक रूप क्या रह जाता है? इन योजनाओं को क्रियान्वित करने वाली नौकरशाही का चरित्र क्या है, ग्रामवासियों व स्वयंसेवी संस्थाओं के प्रति उनकी दृष्टि और व्यवहार क्या है?

हमें सन्तोष और हर्ष है कि हमारे निमन्त्रण को स्वीकार कर अनेक स्वयंसेवी संस्थाओं ने अपने अनुभव लिपिबद्ध करके हमारे पास भेजे। इनमें से केवल दो-चार प्रयोगों को ही विशेषांक में समाविष्ट किया जा सका था। शेष प्रयोगों व अनुभवों को

इस अंक में प्रस्तुत किया जा रहा है। अतः, इस अंक को ग्राम-पुनर्रचना विशेषांक का पूरक या परिशिष्टांक कहना ही समीचीन रहेगा।

इस अंक में प्रस्तुत अनुभव संख्या में केवल ३४ होते हुए भी ग्राम-पुनर्रचना के क्षेत्र में सक्रिय लगभग सभी प्रकार की स्वयंसेवी संस्थाओं के अनुभवों को प्रतिबिम्बित करते हैं। भौगोलिक दृष्टि से इनमें सुदूर दक्षिण में तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक व आन्ध्र प्रदेशों से लेकर पूर्व में उड़ीसा व बंगाल, पश्चिम में महाराष्ट्र व गुजरात, उत्तर में हिमाचल प्रदेश व हरियाणा तक फैले हुए लगभग प्रत्येक राज्य में काम करने वाली संस्थाओं को सम्मिलित कर लिया गया है। कर्म क्षेत्र का विचार करें तो वनवासी, गिरिजन हरिजन व मैदानी कृषकों आदि विभिन्न वर्गों के बीच कार्य के अनुभवों का यहां संकलन हो गया है।

उद्गम स्रोत व प्रेरणा की दृष्टि से देखें तो १९३२ में स्थापित हरिजन सेवक संघ व १९४० में स्थापित गांधी निकेतन हमें सीधे-सीधे स्वाधीनता संघर्ष के गांधी युग से जोड़ देते हैं, जबकि विलेज रिकन्सट्रक्शन आर्गनाइजेशन, क्रिश्चियन चिल्ड्रेन्स फन्ड व चर्च आफ साउथ इन्डिया जैसे अनेक प्रयासों का उद्गम स्रोत ईसाई मिशनरी गतिविधियों में विद्यमान है। पेनुकोंडा (आन्ध्र) में सक्रिय यंग इन्डिया प्रोजेक्ट की प्रेरणा स्पष्ट रूप से मार्क्सवादी है तो कृषि ग्राम विकास केन्द्र (जमशेदपुर), एक्सेल इन्डस्ट्रीज (बम्बई) व डालमिया सीमेंट आदि के प्रयास देश के बड़े औद्योगिक घरानों की ग्राम-विकास के कार्य में रुचि के परिचायक हैं। हिमाचल प्रदेश में कार्यशील सोशल वर्क एवं रिसर्च सेन्टर के पीछे बंकर राय जैसे सुशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ता की प्रेरणा विद्यमान है तो कुमायुं क्षेत्र में सक्रिय पर्वतीय युवा मंच अपने क्षेत्र के शोषण के विरुद्ध स्थानीय युवकों के विद्रोह का प्रतीक है। नागपुर कृषि महाविद्यालय के माध्यम से उच्च शिक्षा संस्थानों के प्रयासों का नमूना दिया गया है तो सामुदायिक विकास के क्षेत्र में सरकारी प्रयत्नों के आरम्भ बिन्दु के रूप में नीलोखेड़ी प्रयोग का वर्णन किया गया है।

इन संस्थाओं का कार्यक्षेत्र व कार्यशैली भी अलग-अलग है। ग्राम सेवा समिति, होशंगाबाद (म० प्र०), विलेज रिकन्स्ट्रक्शन आर्गनाइजेशन (आन्ध्र प्रदेश), गांधी निकेतन (तमिलनाडु) आदि ने समग्र विकास का लक्ष्य सामने रखा है तो क्रिश्चियम चिल्ड्रेन्स फन्ड का कार्य बाल विकास के कार्यक्रमों के लिये विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करना मात्र है। वालन्टरी हैल्थ सर्विसेज सेन्टर आदि कुछ संस्थाओं का पूरा ध्यान केवल स्वास्थ्य कार्यों पर ही केन्द्रित है। वेरला डेयरी प्रकल्प के अन्तर्गत महाराष्ट्र के सांगली नामक स्थान पर डेयरी, पशु-पालन व पशु चिकित्सा के क्षेत्र में प्रयोग किये जा रहे हैं। चंबल की खौफनाक घाटियों में डाकुओं के बीच श्री सुब्बाराव के नेतृत्व में कार्य करने वाले महात्मा गांधी सेवा आश्रम का काम अपने आप में अलग प्रकार का है। कुछ संस्थाएं प्रत्यक्षतः विकास कार्यक्रमों को चला रही है तो कुछ केवल वित्तीय सहायता प्रदान करती है, और कुछ ने अपने जिम्मे केवल प्रशिक्षण एवं आकलन का काम ले रखा है।

ग्राम-पुनर्रचना के प्रयोग में तीन तत्वों का मुख्य रूप से योगदान रहता है। (१) कार्यकर्ता (२) साधन (३) ग्रामीण समाज। कुछ लोगों का विचार है कि इन तत्वों में "जीवन-दर्शन" नामक चौथे तत्व को भी सम्मिलित किया जाय। इनका आग्रह है कि जीवन दर्शन प्रथम तत्व है क्योंकि जीवन दर्शन को सामने रखकर ही तो कोई कार्यकर्ता ग्राम-पुनर्रचना की प्रयोगशाला में प्रवेश करता है। किन्तु कुछ अन्य प्रयोगकर्ताओं का कहना है कि भारतीय सन्दर्भ में ग्राम-पुनर्रचना के युगानुकूल जीवन दर्शन का विकास प्रत्यक्ष कर्म में से ही होगा। उदाहरणार्थ, वे कहते हैं कि गांधीवादी जीवन दर्शन के अनुसार परम्परागत ग्रामीण शिल्पों को जीवित रखना एवं उन्हें विकसित करना ग्राम-पुनर्रचना का अनिवार्य अंग होना चाहिए, किन्तु इस दिशा में प्रत्यक्ष कर्म करने पर अनुभव आता है कि ग्रामीण लोग ही अब अपने यहां के परम्परागत उत्पादनों का उपभोग करने को उत्सुक नहीं हैं। उनके मन शहरी रहन सहन, आधुनिक वेशभूषा व मनोरंजन के अधुनातम माध्यमों को अपनाने के लिए ललक रहे हैं। दूसरे शब्दों में कहना हो तो गांव में रहते हुए भी वे शहरी मानस से ग्रस्त है। यह स्थिति हमारे सामने पुनः यह मौलिक प्रश्न खड़ा कर देती है कि आधुनिक टैक्नॉलॉजी का हमारे जीवन में क्या स्थान हो। इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर खोजे बिना ग्राम-पुनर्रचना का कोई भी कल्पना चित्र सामने रखकर चलना असंभव होगा।

इस अंक में प्रस्तुत अनुभवों में यह बात कई जगह उभरी है कि ग्रामीण समाज का पूरा सहभाग ग्राम-पुनर्रचना के प्रयासों में अब तक नहीं लिया जा सका है। ग्रामीण लोगों की दृष्टि में इन प्रयासों का एक ही अर्थ रह गया है कि कुछ बाहरी कार्यकर्ता मुफ्त के साधन उनके बीच वितरित कर जायें। लोक सेवा समिति (बंगाल) का तो यहाँ तक कहना है कि "सहायता पाना वे अपना अधिकार समझते हैं, मुफ्त में मिली चीज समझते हैं। वस्तुओं के रख-रखाव के प्रति कोई सावधानी नहीं बरतते।' ग्राम-पुनर्रचना के क्षेत्र में लगे हुए एक वरिष्ठ व अनुभवी कार्यकर्ता श्री बनवारी लाल चौधरी का कहना है कि बाहरी कार्यकर्ता का प्रयास ग्रामीण लोगों के अभावों व आवश्यकताओं की पूर्ति करना न होकर उनमें स्वावलम्बन की भावना जगाने के लिये अवसर प्रदान करना होना चाहिए, उनकी प्रगति के मार्ग में आने वाली बाधाओं को उन्हीं के सहयोग से हटाने का प्रयास करना चाहिये। भगवतुल चेरिटेबुल ट्रस्ट एवं अन्य प्रयोगों में सम्मिलित कार्यकर्ताओं का कहना है कि बाहरी कार्यकर्ताओं को ग्राम विकास का पहले से बना-बनाया कोई चित्र अपने साथ ले जाने के बजाय ग्रामवासियों के साथ बैठकर ही उनके क्षेत्र की समस्याओं का विचार करते हुए अपना भावी कार्यक्रम की रूपरेखा बनाना चाहिए और इस प्रकार कार्य के प्रथम चरण से ही ग्रामवासियों का सहभाग प्राप्त करना चाहिए। इन सभी अनुभवों का निचोड़ है कि ग्राम-पुनर्रचना का अर्थ भौतिक साधनों को बाहर से ले जाकर गांवों में उंडेलना नहीं तो ग्रामीण समाज में स्वावलम्बन व परस्पर सहयोग का भाव जाग्रत करना है। ग्रामवासियों को ही उनके अपने विकास में जुटाना है, न कि सब भार अपने कन्धों पर ले लेना।

एक और महत्वपूर्ण पहलू की ओर ग्राम विकास की इन अनेकविध अनुभवों में ध्यान आकर्षित किया गया है और वह है सरकारी योजनाओं को क्रियान्वित करने वाली नौकरशाही का दृष्टिकोण व व्यवहार। लगभग सभी का यह अनुभव रहा है कि सरकार की ओर से योजनाओं की कमी नहीं है, उनके लिये अपार धनराशि भी खर्च की जा रही है, किन्तु उसका कोई ठोस परिणाम नहीं निकल पा रहा है तो केवल इस कारण कि सरकारी कर्मचारियों का मन इस कार्य में नहीं है। उनकी शहरी मानसिकता को ग्रामीण जीवन में कोई रस नहीं मिल पाता। चर्च आफ साउथ इन्डिया व सोशल वर्क एण्ड रिसर्च सेन्टर के अनुभव इस दृष्टि से बहुत विचारणीय है।

इन अनुभवों के अध्ययन से यह बात भी सामने आती है कि ग्राम-पुनर्रचना के विभिन्न प्रयासों के सामने प्रमुख कठिनाई भौतिक साधनों की उतनी नहीं है, जितनी कि मानवी साधनों की है। ग्राम-पुनर्रचना के कार्य को जीवन व्रत बनाकर उसमें जीवन खपाने वाले कार्यकर्ताओं का लगभग अकाल सा हो गया है। वेतनभोगी कर्मचारियों के बल पर ही अधिकांश स्वयंसेवी संस्थायें अब टिकी हुई है। स्वयंसेवी संस्थाओं की प्रेरणाओं में भी भारी परिवर्तन आ रहा है। अनेक संस्थाओं का जन्म केवल इस कारण हुआ है कि वे ग्राम-विकास के नाम पर सरकारी या विदेशी सहायता प्राप्त कर सकें अथवा आय कर से मुक्ति पा सकें।

अनेक कार्यकर्ताओं ने अपने अनुभवों में इस बात का उल्लेख किया है कि वोट व दल की राजनीति ने प्रत्येक गांव में फूट के बीज बो दिये हैं। राजनीतिक कार्यकर्ताओं की कोशिश रहती है कि उनके कार्यक्षेत्र में चलने वाले प्रत्येक कार्य पर उनका नियन्त्रण रहना चाहिए व उस कार्य को उनकी राजनीति का हस्तक बनना चाहिये। यदि कोई रचनात्मक कार्यकर्ता उनकी राजनीति का हथियार बनने को तैयार नहीं होता तो उसे उनके विरोध का सामना करना पड़ता है राजनीति का यह चरित्र रचनात्मक कार्यों के निकास में भारी बाधा है।

इस प्रकार अलग-अलग तरह के कार्यक्षेत्रों व जन समूहों में कार्य करने के कारण इन सभी संस्थाओं के अनुभव व प्रयोग बहुत ही मूल्यवान हैं। इनका अध्ययन करने से ऊपर उठाये गये लगभग सभी प्रश्नों के उत्तर मिल सकते हैं। अभी तक ये संस्थायें एक दूसरे से कटे हुए द्वीपों की तरह अलग-अलग कार्य करती रही है। उनके बीच विचारों व अनुभवों के आदान-प्रदान का कोई पुल अभी तक नहीं बन पाया है। "मन्थन" का यह अंक इस पुल के निर्माण की प्रक्रिया का आरम्भ करने की दिशा में पहला कदम है। हमें विश्वास है कि यह प्रक्रिया आगे बढ़ेगी और अपने-अपने कर्मक्षेत्र में पूरी निष्ठा व लगन के साथ कर्मरत ये सभी प्रयास द्वीपवत स्थिति से बाहर निकलकर एक दूसरे के अनुभवों से लाभान्वित होते हुए ग्राम पुनर्रचना के व्यापक राष्ट्रीय अभियान की कड़ी बन सकेंगे। □



# गांधीवा
# का एक
# प्रयोग

□ के०

गांधी निकेतन की
सपनों के गांव
हुई। उसकी मूल प्रे
और साध्य का सिद्धां
ग्रामवासियों को स्व
सफल प्रयास किये।
एक प्रकार से ग्राम से
कार्यकर्ता, विस्तार अ
ब्लॉक डेवलपमेंट ऑ
कारी आदि सरकारी
केंद्र बन गया। हम
निकेतन में प्रशिक्षि
प्रति न केवल सहानु
उनके विकास के लिए
उन्होंने बिल्कुल सड़
साधने के लिए अपने
विभिन्न इकाइयों में
वाले लोगों के लिए
व विद्यार्थियों ने मि
हवादार मकानों का
मिट्टी की और छतें
को राज्य सरकार की
सामूहिक प्रयास औ
से सहयोग देने के लि
न्नता की बात थी कि

# गांधीवादी शैली का एक सफल प्रयोग

□ के० मुरियान्डी
सचिव

गांधी निकेतन की स्थापना महात्मा गांधी के सपनों के गांव को साकार करने के उद्देश्य से हुई। उसकी मूल प्रेरणा भी गांधी जी का साधन और साध्य का सिद्धांत ही था। आरंभ में तो हमने ग्रामवासियों को स्वतंत्रता आंदोलन से जोड़ने के सफल प्रयास किये। परंतु ६ वर्ष पश्चात् ही आश्रम एक प्रकार से ग्राम सेवक, ग्राम-सेविकाएं, रचनात्मक कार्यकर्ता, विस्तार अधिकारी (औद्योगिक व खादी) ब्लॉक डेवलपमेंट ऑफीसर, विभागीय राजस्व अधिकारी आदि सरकारी अधिकारियों के लिए प्रशिक्षण केंद्र बन गया। हमारा यह अनुभव है कि गांधी निकेतन में प्रशिक्षित अफसरों ने ग्रामवासियों के प्रति न केवल सहानुभूतिपूर्ण रवैया अपनाया बल्कि उनके विकास के लिए गंभीरतापूर्वक काम भी किया। उन्होंने बिल्कुल सड़क चलते आम आदमी से संपर्क साधने के लिए अपने आप ही खादी को अपनाया। विभिन्न इकाइयों में आश्रम में ही रहकर काम करने वाले लोगों के लिए आश्रम के प्रांगण में अध्यापकों व विद्यार्थियों ने मिलकर अपने हाथों से सस्ते किन्तु हवादार मकानों का निर्माण किया जिनकी दीवारें मिट्टी की और छतें खपरैल की थीं। ग्रामवासियों को राज्य सरकार की विकास योजनाओं में श्रमदान, सामूहिक प्रयास और आत्मनिर्भरता की भावना से सहयोग देने के लिए प्रेरित किया गया। यह प्रसन्नता की बात थी कि ग्रामवासियों ने सड़क-निर्माण,

**गांधी निकेतन**
**स्थापना वर्ष : सन् १९४०**
**कार्यक्षेत्र : कल्लुपट्टी मदुराई**
**संस्थापक : श्री जी० वेंकटाचलापति**

नालियों और शौचालयों का काम हाथ में लिया जिसमें सरकार से कम से कम सहायता ली गई थी। १९४६ में गांधी जी के प्राथमिक शिक्षा के विचार को साकार रूप देने के लिए एक प्राथमिक विद्यालय की स्थापना की गई। हलांकि आरंभ में कुछ स्थानीय विरोध का सामना करना पड़ा किंतु अंततः यह एक उच्चतर विद्यालय बना जिसमें सारे तमिलनाडु से विद्यार्थी पढ़ने के लिए आते थे। ये विद्यार्थी स्कूल के खेतों में परिश्रम करके अपने भरण-पोषण लायक कमा लेते थे और परिणामस्वरूप उन्हें अपने भोजन या शिक्षा के लिए एक भी पैसा पास से खर्च नहीं करना पड़ता था। विद्यार्थियों ने ऐसे भूमि के टुकड़े पर खेती की जिसे पहले के स्वामियों ने बेकार कह कर छोड़ दिया था और जब उसमें सर्वाधिक धान उत्पन्न हुआ तो गांव वालों का ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ। उच्चतर प्राथमिक विद्यालय के विद्यार्थियों ने १९५४-५५ तक खाद्यान्न में १०४% आत्म निर्भरता प्राप्त कर ली थी। अतः गांधीवादी शिक्षा का कल्लु पट्टी का यह साहसिक प्रयोग अपने आपको सच्चे अर्थों में ग्राम-विद्यालय सिद्ध कर सका। अब यह एक उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के रूप में काम कर रहा है जहां व्यावसायिक शिक्षा पर अधिक जोर दिया जाता है तथा उसमें ७५ अध्यापक और २,००० से अधिक विद्यार्थी हैं।

खादी आंदोलन को आगे बढ़ाने की दिशा में भी गांधी निकेतन ने काम किया। खादी कार्यक्रम के अंतर्गत ३०० टैक्स्टाइल, १५० अंबर व ६०० परंपरागत चरखा कातने वालों और ७५ बुनकर परिवारों को अंत तक रोजगार दिया जा चुका है। आज यह ७.५ लाख रुपये की खादी का उत्पादन करता है जिसे कुछ ही वर्षों में दुगना करने की योजना है। गांधी जी का स्वदेशी का सिद्धांत लोग अपनाने लगे हैं यह इसी बात से लगता है कि हमारे कार्य-क्षेत्र में खादी-उपभोग की दर पांच वर्षों में ही

५० पैसे से बढ़कर ४ रुपये प्रति व्यक्ति हो गई है। खादी और ग्रामोद्योग कमीशन के प्रथम अध्यक्ष श्री वैकुण्ठलाल मेहता ने १९५६ में हमें भरपूर सहायता राशि व ऋण प्रदान किये ताकि हम आश्रम में खादी ग्रामोद्योग की विभिन्न इकाइयों को चालू कर सकें और उनमें प्रभावी ढंग से काम करने के लिए लोगों को प्रशिक्षित कर सकें। इसकी सहायता से अब हम खाल उतारने, चमड़ा कमाने और चमड़े का सामान बनाने वाली इकाइयां, तेल से बनने वाले साबुन की इकाई, ग्राम तेल इकाई, हाथ के बने कागज की इकाई, मक्खीपालन इकाई, मिट्टी के बर्तन बनाने वाली इकाई इत्यादि चला रहे हैं। हमारे निकट के चमार चमड़ा इकाई को कच्चा चमड़ा बेचते हैं और चप्पल इत्यादि बनाने के लिए कमाया हुआ चमड़ा खरीदते हैं साथ ही उनकी संतानों को यहां आधुनिक जूते, सूटकेस, ब्रीफकेस, बेल्ट इत्यादि बनाने की वैज्ञानिक प्रक्रियाओं का प्रशिक्षण दिया जाता है। विशेष बात यह है कि यहां हिंदू जाति के अन्य लोग भी साथ-साथ इन कामों का प्रशिक्षण लेते हैं और एक ही छात्रावास में रहते हैं। उन्हें १२० रुपये प्रतिमास की छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है। हमारे गांव में लगभग १०० प्रशिक्षित कार्यकर्त्ता ऐसे हैं जो हमारी ग्रामोद्योग इकाइयों में कार्य कर रहे हैं और प्रोविडेंट फंड, ग्रेच्युटी, आवास-सुविधाओं इत्यादि का लाभ उठा रहे हैं। १९७६ में आरंभ किया गया महाविद्यालय १९६५ में क्षेत्रीय आयोजन संस्थान के रूप में परिवर्तित कर दिया गया ताकि १९७६ तक सारे भारत में ब्लॉक स्तर तक के कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण दिया जा सके। खादी ग्रामोद्योग विद्यालय आज भी चल रहा है जहां ग्रामोद्योग कार्यकर्ता व नए बुनकर प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं। हमारे गांव की बर्तन बनाने वाली इकाई ने मगन (धुंआहीन) चूल्हे, उत्कृष्ट चाक आदि बनाने में विशिष्टता प्राप्त की है। नीम के बीजों (निबोलियों) के मौसम में प्रति वर्ष ग्रामवासी इन्हें आश्रम को बेच देते हैं जिनसे निकले तेल से हम साबुन बनाते हैं। मधुमक्खी पालन इकाई पहाड़ी क्षेत्रों में आधुनिक तौर तरीकों से शहद निकालने का काम करते हैं जिससे ग्रामवासियों को फसल के अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।

गांधी जन्म शताब्दी वर्ष में हमने ग्रामदान आंदोलन को अधिक गंभीरतापूर्वक लिया। दिसंबर १९६६ में लगभग १०० शिक्षित बेरोजगार युवकों को गांधी निकेतन में तीन दिन का प्रशिक्षण देकर मदुराई जिले के ८ ब्लॉकों में स्वेच्छा से सुलभ ग्रामदान हेतु हस्ताक्षर एकत्रित करने के लिए भेज दिया गया। इस दिशा में अन्य अभियान भी शुरू किए गए। इन प्रयोगों का अनुभव अत्यंत रोचक रहा। पेरिया कट्टालाई नामक स्थान शताब्दियों से वहां के चोरों के लिये कुख्यात है। प्रान मलाई कल्लार की इन जातियों ने स्वेच्छा से चोरी त्याग कर कृषि और छोटे-मोटे व्यापार को अपनाया। ग्राम सभा ने उन्हें सम्मानित नागरिकों का दर्जा दिया जिससे उनका गौरव बढ़ा।

मदुराई कामराज विश्वविद्यालय से संबद्ध रह कर हम लोग १९६९ से गांधीवादी विचारधारा पर आधारित एक कॉलेज भी चला रहे हैं जहां इच्छुक विद्यार्थी डिग्री व डिप्लोमा कोर्सों के लिये विश्वविद्यालय की परीक्षा में बैठते हैं। सप्ताह में दो दिन दो घंटे प्रतिदिन के लिए सायंकालीन कॉलेज में जाते हैं और बहुमुखी समस्याओं के समाधान के लिए गांधीवादी तरीकों का अध्ययन करते हैं। यह गौरव की बात है कि उनमें से बीस प्रतिशत लोगों के दैनिक जीवन में गुणात्मक परिवर्तन आया है।

हमारा यह भी अनुभव है कि केंद्रीय सरकार की राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा योजना ग्रामवासियों के जीवन को सुधारने में भारी योगदान कर सकती है। कल्लापुट्टी और कल्ली गुड्डी ब्लॉकों में हमने १२० ऐसे केंद्र चालू किये हैं जहां प्रत्येक स्थान पर तीस पुरुषों व महिलाओं की संख्या रहती है। लगभग ३६०० लोग आज सामूहिक गीत गा सकते हैं, कहानियाँ सुना सकते हैं तथा अखबार व किताबें भी पढ़ सकते हैं। वे लोग न केवल अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त कर सकते हैं बल्कि लोक नृत्य और लोक नाटक भी ज्यादा लोगों तक पहुंचाने में समर्थ हैं।

अंततः मैं यह कह सकता हूं कि गांधीवादी शैली भारतीय परिस्थितियों में सर्वोत्तम है। यही हमारे अनुभव का सार है। □



विपत्ति में
का अवसर

□

प्रो० एम० ए० विं
प्रो० आर० वी० क

□

विलेज रिकन्स्ट्रक्शन
स्थापना वर्ष
कार्यक्षेत्र : आंध्रप्र
उड़
निदेशक : डा० ए

वर्ष में हमने ग्रामदान
रतापूर्वक लिया। दिसंबर
शिक्षित बेरोजगार युवकों
दिन का प्रशिक्षण देकर
में स्वेच्छा से सुलभ ग्राम-
करने के लिए भेज दिया
अभियान भी शुरू किए
भव अत्यंत रोचक रहा।
थान शताब्दियों से वहां के
। प्रान मलाई कल्लार की
चोरी त्याग कर कृषि और
नाया। ग्राम सभा ने उन्हें
दर्जा दिया जिससे उनका

श्वविद्यालय से संबद्ध रह
गांधीवादी विचारधारा पर
चला रहे हैं जहां इच्छुक
ा कोर्सों के लिये विश्व-
ठते हैं। सप्ताह में दो दिन
यंकालीन कॉलेज में जाते हैं
के समाधान के लिए गांधी-
न करते हैं। यह गौरव की
प्रतिशत लोगों के दैनिक
र्तन आया है।
भव है कि केंद्रीय सरकार
योजना ग्रामवासियों के
री योगदान कर सकती है।
ड़ी ब्लॉकों में हमने १२०
हां प्रत्येक स्थान पर तीस
ख्या रहती है। लगभग
क गीत गा सकते हैं, कहा-
अखबार व किताबें भी पढ़
वल अपनी भावनाओं को
ल्कि लोक नृत्य और लोक
तक पहुंचाने में समर्थ हैं।
कता हूं कि गांधीवादी शैली
में सर्वोत्तम है। यही हमारे
□



# विपत्ति में विकास का अवसर

□

प्रो० एम० ए० विंडे
प्रो० आर० बी० कोल्हटकर

□

**विलेज रिकन्स्ट्रक्शन आर्गेनाइजेशन**
स्थापना वर्ष : १९६५
कार्यक्षेत्र : आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, उड़ीसा
निदेशक : डा० एम० ए० विन्डे

हमारी संस्था पिछले लगभग दस वर्षों से ग्राम विकास के क्षेत्र में सक्रिय है। हमारे प्रयोग का मूल ढांचा ग्रामीण निर्धनता व पिछड़ेपन के कारणों का पता लगाने और इन समस्याओं का समाधान ढूंढने पर आधारित है। स्वाभाविक है कि ग्राम विकास में हमारे अनुभव परंपरागत रूप से आर्थिक सहायता पर आधारित संस्थाओं से काफी अलग हैं। हमारे प्रकल्प का ध्यान केवल कृषि पर ही नहीं बल्कि सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, व्यावसायिक और औद्योगिक पहलुओं पर भी है। हमारा अनुभव है कि सरकारी नौकरशाही प्रशासनिक व राजनैतिक स्तरों पर ग्रामीण वास्तविकताओं को ठीक प्रकार से समझा नहीं गया है। पिछले ५० से १०० वर्षों में गांवों के स्वरूप में भारी परिवर्तन आया है। शुरू में तो प्रति ५०० व्यक्तियों के लिए २००० से ३००० एकड़ तक भूमि उपलब्ध थी पर अब उतनी ही जगह पर चार-पांच गुना लोग निर्भर करते हैं। बहुत से गांव खाली हो रहे हैं। अकेले आंध्र प्रदेश में ही कुल २९,००० गांवों में से २,००० गांवों में आज कोई नहीं रहता। अन्य स्थानों पर ऐसे गांवों की संख्या ५ से १५ प्रतिशत तक है। यह भी महसूस किया गया कि गांवों में रहने वाले लोगों के मन में आज भी डर समाया हुआ है। बंधुआ मजदूर अपनी दर्द-भरी दास्तान सुनाने में आज भी डरते हैं। आमतौर पर रोजगार के प्रकार पूर्व निश्चित हैं। हमने अपने प्रयोग में १२ से १४ वर्ष तक की आयु के किशोरों के लिए दस्तकारी प्रशिक्षण की व्यवस्था की है ताकि उनके लिए काम के नये दरवाजे खुल सकें। बाहरी और आंतरिक नेतृत्व का गांव वालों के दिलो-दिमाग पर क्या असर पड़ता है यह भी एक महत्वपूर्ण बात थी। ग्राम-विकास का मूल आधार बदलती ग्रामीण जीवन शैली, गांवों के सामाजिक ढांचे और गांव व शहर के बीच के संबंधों के अनुरूप गांव वालों की प्रवृत्तियों में बदलाव लाना है। इन तीनों के दृष्टिकोण से ग्राम-विकास में प्रवृत्ति का अत्यधिक महत्व है। गांव वालों की प्रवृत्तियों में अपेक्षित परिवर्तन लाने के लिए सबसे पहले उन लोगों पर ध्यान देना होगा जो इस परिवर्तन को लाने की जिम्मेदारी अपने सिर लेते हैं। इस काम के लिए ऐसे ग्रामीण जिन्हें गांव

के बाहर की दुनिया का कुछ अनुभव रहा हो, जैसे सेवानिवृत्त सिपाही—बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं।

हमें एक बहुत महत्वपूर्ण अनुभव संकट और विकास के परस्पर संबंध को लेकर हुआ। हमें लगा कि विकास और परिवर्तन का सबसे उपयुक्त अवसर संकटकाल ही है। सामान्य तौर पर विकास के काम सिद्धांतवादिता के ढांचे पर खड़े किये जाते हैं, कभी उनके पीछे राजनैतिक उद्देश्य होते हैं या कभी दया-दान की भावनाओं में बहकर जोश में काम शुरू कर दिया जाता है। परंतु ग्राम-विकास की हमारी शैली अलग है। आमतौर पर विकास प्रकल्प या ऐसे विचार किसी समुदाय की खराब स्थिति होने पर अपने आप नहीं उपजते। परंतु हमें लगता है कि कुछ व्यक्ति या समूह धीरे-धीरे बदलते हैं और सामाजिक तौर पर परिस्थितिगत संकट की विवशता उन्हें काम करने को मजबूर कर देती है। परिवर्तन का काम बिल्कुल सीधी-सीधी सड़क पर चलने जैसा नहीं है। यहां तो हमें एक घुमावदार रास्ता तय करना पड़ता है। इसीलिए पहला कदम ही सोच-समझकर रखा जाना चाहिए। आरंभ में कम से कम विकास की सही दिशा तय होना बहुत जरूरी है। खास तौर पर भारतीय परिप्रेक्ष्य में जहां बने बनाए ढाँचे में बदलाव की इच्छा बहुत कमजोर है जब तक कोई संकट सिर पर न आ पड़े बदल जाना असंभव ही रहता है। जन जातियों का समाज, जो कम आधुनिक है, उसका व्यवहार थोड़ा भिन्न रहता है, लेकिन मोटे तौर पर समाज भी राष्ट्रों की तरह अपनी विफलताओं से सबक नहीं लेते। "विलेज रिकंस्ट्रक्शन आर्गेनाइजेशन" एक ऐसे व्यवस्थित प्रयास में जुटी है जिसके अंतर्गत प्राकृतिक विपत्तियों के बाद दूरगामी परिवर्तन और स्थायी सुधारों के लिए तुरंत कदम उठाए जाते हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में और विशेष रूप से पूर्वी तट-प्रदेश में ऐसे अवसरों की कोई कमी नहीं है। दुर्भाग्य से अधिकारियों द्वारा ऐसी विपत्तियों को बहुत बार तात्कालिक सहायता-कार्यों की दृष्टि से देखा जाता है। यह भी सत्य है कि संकट के इन क्षणों में इन क्षेत्रों की निर्धनता के ऐसे कारण उभरकर सामने आते हैं जो अन्यथा छिपे रहते हैं। अधिकारियों को साधारण तौर पर केवल गरीबी के लक्षणों और परिणामों की ही जानकारी रहती है। भूख, तकलीफ, आघात, गरीबी और असुरक्षा की दर्दनाक लहरों से ही उनका सामना होता है। असमय विपत्ति से प्रभावित असहायों की मदद के लिए हो सकता है वे लोग शक्ति जुटा दें। इसी प्रकार राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर चिंता के कारण भी विभिन्न प्रकार के विशिष्ट सहायता-स्रोत जुटाए जा सकते हैं जो फिर से स्थिति सामान्य करने का काम करें।

परंतु वास्तव में आवश्यकता फिर से वही स्थिति लौटाने की नहीं होती बल्कि लोगों को बदलने की होती है। जरूरत तात्कालिक सहायता की नहीं अपितु विकास के छिपे साधनों को तलाशने की होती है। बिहार में १९६६-६७ के अकाल के दौरान और बाद में १९६९-१९७० में आंध्र प्रदेश व उड़ीसा में आए चक्रवातों के दौरान यही शैली अपनाई गई थी। इस बात के पर्याप्त प्रमाण है कि ऐसी संकटपूर्ण परिस्थितियों में विकास कार्यक्रमों में न केवल कठिनाइयां आती हैं बल्कि भारी विरोध का भी सामना करना पड़ता है परंतु यह कार्य जैसे बड़े पैमाने पर तट-प्रदेशों में वन लगाना, पक्के भवनों का निर्माण, फसल उगाने के तरीके में परिवर्तन, पीने के पानी की पूर्ति का प्रबंध यहां तक कि विभिन्न जातियों के गुटों का पुनर्गठन आदि ऐसे समय में ही शुरू किये जा सकते हैं।

संकट की ये परिस्थितियां अन्य कई प्रकार की भी हो सकती हैं जैसे अल्पसंख्यकों को प्रभावित करने वाले संघर्ष या भूमि, शिक्षा या बेरोजगारी से संबद्ध संकटों में। भारत में संकट और विकास के परस्पर संबंध में गहराई से अध्ययन करने का भी कोई प्रयास अब तक नहीं हुआ है। □

ह। यह भी सत्य है
गों की निर्धनता के
हैं जो अन्यथा छिपे
रण तौर पर केवल
गों की ही जानकारी
घात, गरीबी और
ही उनका सामना
भावित असहायों की
ग शक्ति जुटा दें।
ट्रीय स्तर पर चिंता
विशिष्ट सहायता-
से स्थिति सामान्य

फिर से वही स्थिति
ोगों को बदलने की
सहायता की नहीं
तलाशने की होती
ाल के दौरान और
प्रदेश व उड़ीसा में
ी अपनाई गई थी।
ऐसी संकटपूर्ण परि-
न केवल कठिनाइयां
भी सामना करना
ड़े पैमाने पर तट-
वनों का निर्माण,
र्तन, पीने के पानी
विभिन्न जातियों के
य में ही शुरू किये

अन्य कई प्रकार की
को प्रभावित करने
रोजगारी से संबद्ध
विकास के परस्पर
का भी कोई प्रयास

□



# इच्छाशक्ति और समग्र दृष्टि का अभाव

□

बनवारी लाल चौधरी

□

**ग्राम सेवा समिति**
**स्थापना वर्ष : १९५३**
**कार्यक्षेत्र : हौशंगाबाद जिला**

२८ वर्ष पहले हमने ग्राम सेवा कार्य ग्राम सेवा समिति के माध्यम से आरम्भ किया। प्रारंभिक ध्येय लोगों की आर्थिक स्थिति सुधारना यानी गरीबी मिटाना था। ग्राम को सड़क, बिजली, शाला और प्राथमिक उपचार की सहूलियतें उपलब्ध हों जिससे ग्रामीणों का जीवन सुधरे। इस निमित्त निम्नलिखित कार्यक्रम सफलतापूर्वक सम्पन्न हुए।

(१) सिचाई के लिए कुओं का निर्माण। लगभग १० वर्षों में ग्राम के पूरे क्षेत्र की सिंचाई कुएं से की जाने लगी थी।

(२) उन्नत किस्म के कृषि बीजों का प्रसार। यह तीन वर्षों में ही शत प्रतिशत हो गया।

(३) प्राइमरी शाला, कस्तूरबा आरोग्य सेवा एवं बालवाड़ी सन् १९५२ से ही आरम्भ हो गये थे।

(४) संकर जाति की गेहूं की फसल हेतु ग्राम में रासायनिक खाद का उपयोग बढ़ा। सन् १९५२ में कुल २७ रुपये का रासायनिक खाद आया था, गत वर्ष ७० ००० रुपये का रासायनिक खाद आया।

(५) ग्रामीण बैंक ने लोगों को एक लाख रुपया उधार देकर ७० भैंसे उपलब्ध कराई।

**फलश्रुति**

ग्राम का उत्पादन बढ़ा, कुछ एक पक्के मकान बने, ३ वर्षों तक खुशहाली रही। ऐसा लगा कि गांव ने बाजी जीत ली है, परन्तु फिर ग्राम में क्रमश. गरीबी बढ़ी, उत्पादन गिरा, लोग कर्ज में दब गये, आपसी कलह बढ़ी, पुलिस का प्रवेश हुआ, मुकदमेबाजी चल रही है, रिश्वतखोरी हो रही है और ऐसा लगता है कि इस प्रकार से गांव सन् १९५२ से भी खराब हालत में पहुंच गया है।

मध्य प्रदेश के अधिकतर गांवों की यही कहानी है। ऐसा क्यों हुआ ? यह चिंतन का विषय है। हमने इस दुर्गति का एक कारण, बल्कि मूल कारण कार्यक्रम का योजनाप्रधान होना माना। इसने हमें पुनः चिंतन को बाध्य किया और अपने ग्राम सेवा कार्य के उद्देश्यों को पुनः स्पष्ट और निश्चित करने को प्रेरित किया।

**बारह सूत्र**

बदले हुए संदर्भ और अनुभवों के आधार पर

नी के लिये :

क
है।
त
में
यह

या।



हमने अपने उद्देश्यों को बारह सूत्रों में निश्चित किया गया :

(१) ग्राम विकास कार्य में उच्च प्राथमिकता ग्रामीणों के समग्र विकास को दी जानी चाहिये। महत्व की बात उत्तम बीज, उत्तम कृषि औजार आदि नहीं वरन उत्तम किसान हैं, उत्तम नागरिक हैं।

(२) ग्रामीण जनता में उन्नत या अच्छे सुधरे जीवन की आकांक्षा उत्पन्न करना।

(३) उनके मन में यह विश्वास जाग्रत करने में सहायक होना कि प्रयत्न करने से सुथरा जीवन प्राप्त करना संभव है।

(४) सुधारों को प्राप्त करने के लिए उनमें आत्मविश्वास पैदा करने में सहायक होना।

(५) ग्राम समस्याओं के नये हल (उत्तर) खोजना एवं अन्य क्षेत्रों में प्रस्तावित सुझावों का अपने क्षेत्र में परीक्षण कर उनकी क्षमताओं का अपने क्षेत्र के लिए पता लगाना।

(६) अनुभवों का पूर्णरूप से ऐसा सही-सही लेखा रखना कि वह अपने को एवं अन्य लोगों को मार्गदर्शन दे सके।

(७) स्थानीय लोगों का चुनाव एवं प्रशिक्षण जिससे वे ग्राम विकास कार्यक्रम को चालू रख सकें।

(८) ग्रामीण प्रमुखों और चेतन, प्रगतिशील युवकों को ग्राम की विभिन्न सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का व्यावहारिक, वैज्ञानिक एवं बुनियादी ज्ञान हासिल कराया जाय।

(९) जिम्मेदार, स्वशासित एवं स्थानीय ग्राम निर्माण व ग्राम सुधार समिति के गठन, संयोजन एवं अभिक्रम में सहायक होना।

(१०) ग्राम पंचायतों को ग्राम सुधाराभिमुख बनने को प्रेरित करना। उनमें अन्त्योदय की दृष्टि जागृत करना।

(११) ग्राम में तनाव, कलह, झगड़े के कारणों के प्रति जनता को जागृत करना। समाधान और शांति का वातावरण तैयार करने में जामन सरीखा पार्ट अदा करना।

(१२) इस समग्र कार्यक्रम में कार्यकर्ता की भूमिका मित्र, सलाहकार, विचारक और मार्गदर्शक की रहे। वह कार्यक्रम का भार न उठाये, अगुआ न बने। कार्यक्रम ग्राम समाज का है, ग्राम समाज ही उसे उठाये और पूरा करे।

**ग्राम विकास में बाधायें**

हमारे सेवा कार्य के अनुभव के अनुसार ग्राम के समग्र विकास कार्यक्रम के मार्ग में ये स्थितियां बाधक हैं :

(१) जात-पात की भावना, जाति के स्वार्थ को ध्यान में रखकर कार्य करने की प्रवृत्ति।

(२) समाज और जाति पंचायत के लिए लोग प्रशिक्षित हैं परन्तु पूरे ग्राम समाज की दृष्टि से गणतंत्र के लिये विकसित नहीं है, अधिकतर लोगों की भावना "कोउ नृप होये हमहूं का हानी" की है।

(३) व्यक्ति को प्रधानता दी जाती है।

(४) तथाकथित धार्मिक आदेशों को प्रधानता देना न कि सामाजिक अनुभवों को।

(५) सामान्य वृत्ति सब कुछ सरकार पर छोड़ देने की है।

(६) इसी का दूसरा रूप है—जो भी अधिकारी व्यक्ति है उस पर सब कुछ छोड़ देना। उदाहरणार्थ ग्राम का सरपंच जो ठीक समझे करे।

(७) सामाजिक काम किसी का भी नहीं है। इसलिये ग्राम में सामाजिक संडास, नल, हैण्डपम्प आदि असफल होते हैं। सामाजिक प्रकाश व्यवस्था भी नहीं चल पाती और न ही सामाजिक रामकोठी या दुकान।

(८) अनुपयोगी गलत शिक्षा, ग्राम शालाओं की वर्तमान स्थिति और शिक्षकों का व्यवहार।

(९) प्रतिकूल परिस्थिति से संघर्ष न करना वरन् उन्हें ईश्वरी विधान या दण्ड मानकर अंगीकार कर लेना।

(१०) ग्राम के बहुसंख्यकों द्वारा अल्पसंख्यकों का शोषण किया जाना।

(११) चुनाव के कारण गांवों में दलबंदी बढ़ी है।

(१२) सभी शासकीय कार्यक्रमों को शंका की दृष्टि से देखना।

(१३) निहित स्वार्थ के लोगों का दल।

(१४) सामाजिक सद्भावना की कमी।

(१५) ग्राम कार्यकर्ता की कथनी और करनी का अंतर।

(१६) कृषि आमद का उत्पादक उपयोग बहुत कम होना। ग्राम समाज अभी भी सामंतवादी है। सामंतवादी समाज में खर्च की प्राथमिकता इसके लिए जिम्मेदार है।

(१७) ग्रामोपयोगी विज्ञान, तकनीकी सुझावों की कमी। जो सुझाव आये भी हैं वे सामान्य ग्रामीण की आर्थिक क्षमता से परे हैं। उदाहरणार्थ गोबर-गैस संयत्र।

(१८) त्याग या प्रतिबद्ध या मिशनरी भाव से कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं की कमी।

(१९) ग्राम-सुधार योजनाओं का ऊपर से आना। ग्राम के लिए क्या भला है इसका निर्णय आज भी राजधानियों में होता है। इससे ग्राम अभिक्रम जाग्रत नहीं होता।

(२०) ग्रामीण महिलाओं की स्थिति आज भी बहुत दयनीय है।

**समग्र दृष्टि**

लोगों के जीवन में परिवर्तन, सुधार करने के प्रयत्न एकांगी न हों—उन्हें समग्ररूप का होना चाहिये। सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं का आपस में ताना-बाना होता है। अनुभव यह है कि किसी समस्या का उस समस्या के किसी एक भाग या पक्ष पर सुधार के लिये किये गये क्रिया-कलापों का प्रभाव किसी न किसी रूप में ग्राम पर, ग्राम समाज के गठन, सांस्कृतिक एवं आर्थिक ढांचे पर होता है। उदाहारणार्थ ग्राम में भंगीमुक्त संडास ग्राम के भंगी परिवार को बेरोजगार कर देती है। हरिजनों, भूमिहीनों के आर्थिक सुधार के कार्यक्रम ग्राम की कृषि व्यवस्था पर प्रभाव डालते हैं। अतः ग्राम-उत्थान के कार्यक्रमों में इन नई समस्याओं को अनदेखा नहीं करना चाहिये अन्यथा वे विकराल बाधाओं के रूप में खड़ी हो जायेंगी।

समग्र दृष्टि से लिये जाने वाले कार्यक्रम का रूप इस प्रकार होना चाहिये।

(१) कार्यक्रम समाज की आकांक्षाओं को पूरा करे।

(२) वह समाज की सामर्थ्य के अंदर हो।

(३) समग्र रूप से समाज के लिए हितकारी हो। ऐसे कार्यक्रम को सर्वोदय कार्यक्रम कहते हैं।

(४) संस्कृति सभ्यता की लोकशक्ति जाग्रत करे।

(५) कुरीतियों, जड़ताओं का निराकरण करे।

(६) गतिविधिमूलक नहीं, व्यक्तिपूरक हो।

(७) परिपूरक और अनुगामी हो।

(८) समाज के हर सदस्य का अभिक्रम जाग्रत करे।

(९) रूढ़, बंधा हुआ न हो, उसमें लोच होना चाहिये।

(१०) स्वतंत्रता, स्वावलम्बन और क्षमता की ओर अग्रसर करे।

(११) मानस का परिवर्तन कर मानव का विकास करे।

(१२) उसकी प्राथमिकता व्यवहारी हो।

(१३) आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं, अवसरों को प्रदान करे, बाधायें हटाये।

(१४) स्वार्थ पर नहीं, सहयोग पर आधारित हो।

(१५) स्थानीय उपलब्ध साधनों का आधार ले।

(१६) प्रगतिशील हो अर्थात् कदम कदम पर विकास हो।

(१७) आरम्भ अन्तिम व्यक्ति से या अन्त्योदय से हो।

**कठिन कार्य**

समस्या गरीबी की नहीं है। यह तो लक्षण है। खास बीमारी है आपसी संवेदनशीलता की कमी, पड़ोसी धर्म को न मानना। गरीबी, भ्रष्टाचार, राष्ट्रीय भावना की कमी आदि इसका ही प्रतिपल है।

अति दीन, अति गरीब, अंतिम व्यक्ति दरिद्र-नारायण की सेवा करना, उसे सहायता पहुंचाना बहुत कठिन कार्य है, परन्तु इसे नहीं करने का अर्थ नींव या दीवार उठाये बिना ही छप्पर डालना है।

राष्ट्र के निर्माण के लिए ग्राम सेवा कार्य बहुत आवश्यक है पर बहुत कठिन भी है, एकाकी है, यह एक दिव्यदीप प्रज्वलित करने के समान है, इसे बहुत नम्रता, बहुत उत्तरदायित्व और बहुत धैर्य से करना होगा।

□

# गुटबन्दी का घुन कैसे दूर हो ?

□

एन० के० पालीवाल
सचिव

□

**बाल कल्याण समिति**
हरिद्वार (उ० प्र०)
स्थापना वर्ष : १९५७
कार्यक्षेत्र : उत्तर प्रदेश

यद्यपि बाल कल्याण समिति का गठन १९५७ में किया गया था परन्तु उस समय इसकी गतिविधियां नागरिक क्षेत्रों तक ही सीमित रहीं। १९६७ में, जबकि बाल सेविका प्रशिक्षण संस्थान का कार्यभार इसे सौंपा गया, तभी हमारा ध्यान ग्रामीण क्षेत्रों की ओर भी आकर्षित हुआ।

प्रारम्भ में तो हमें ग्रामीण समाज के मन में नगरवासियों के प्रति पीढ़ी-दर-पीढ़ी से चले आ रहे अविश्वास के भावों का सामना करना पड़ा। अधिकांश ग्रामवासी अभी भी नगरवासियों को अपना शोषणकर्ता ही मानते हैं। इस खाई को पाटने के लिए ग्रामीणों में से अनेक प्रशिक्षणार्थियों को चुना गया और इन प्रशिक्षणार्थियों ने ही ग्राम्य-समाज एवं बाल सेविका प्रशिक्षण संस्थान के बीच माध्यम के रूप में कार्य किया। महिला वर्ग का रुख तो उत्साहवर्धक था, किन्तु ग्राम पंचायतों ने पुरुष-वर्ग को पहले से ही इस सीमा तक विभिन्न विरोधी गुटों में विभाजित कर रखा था कि एक गुट दूसरे गुट द्वारा रखे गये किसी भी कार्यक्रम को, भले ही वह कितना भी कल्याणकारी हो, स्वीकार करने को तैयार ही नहीं था, इसलिये इस वर्ग (पुरुष वर्ग) का रुख पर्याप्त निराशाजनक ही था। इस विभाजन के फलस्वरूप ग्राम-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपूरणीय क्षति का अनुभव हो रहा है फिर भी यह प्रवृत्ति अभी भी तेजी से बढ़ती ही जा रही है।

इसीलिये हमें एक भी ऐसा ग्राम नहीं मिला जहां हमें सभी गुटों का सर्वसम्मत समर्थन प्राप्त हो सका हो। क्योंकि समिति का मुख्य सम्बन्ध शिशुओं एवं आसन्नप्रसवा माताओं से ही है अतः हमारा अधिकतर अनुभव भी इसी क्षेत्र का ही है। लोग बाल-कल्याण के आधुनिक दृष्टिकोण को स्वीकार करने को तैयार नहीं और वे अपनी संकुचित सीमाओं में कैद हैं। कुछ हद तो वे ठीक भी हैं। गांवों में अधिकांश छात्रों में दसवीं श्रेणी पास करते ही अपने ग्राम एवं खेतीबाड़ी तथा पारिवारिक शिल्प के प्रति अरुचि और नागरिक जीवन के प्रति आकर्षण उत्पन्न हो जाता है। ग्रामों में व्याप्त वर्तमान तनाव का मुख्य कारण भी यही है कि मनोरंजन के पुराने साधन मृतप्राय होते जा रहे हैं और आधुनिक मनोरंजक गतिविधियों

ग्रामीण बाजार का एक दृश्य

की पहुंच गांवों तक हो नहीं पा रही। जनसंख्या में वृद्धि के लिए भी यह तनाव ही उत्तरदायी है। हमारी अपनी शोचनीय अवस्था एवं शिक्षित ग्रामीणों के बेरूखेपन के कारण आधुनिक वैज्ञानिक विकास के लाभ भी ग्रामीण जन समाज तक पहुंच नहीं पाते।

विभिन्न संस्थाओं द्वारा चलायी जा रही विभिन्न ग्राम-विकास-योजनाओं का ग्रामीण जन समाज की वास्तविकता से न तो कोई यथार्थ संबंध है और न ही इनमें ग्रामीणों के योगदान की कोई व्यवस्था हो रही है। ग्राम विकास कार्य में ग्रामीण समाज का जुड़ना अत्यन्त अनिवार्य है और हमें ग्रामीण क्षेत्रों में ग्राम्यजनों के योगदान के उपायों को उनकी आय बढ़ाने के प्रयत्नों के साथ-साथ ही ध्यान में रखना ही होगा।

मूलभूत स्वास्थ्य सुविधायें—जैसे पेयजल नालियां, अवजल निकासी व्यवस्था आदि यद्यपि आज ग्रामों के लिए बड़ी दूर की चीज है फिर भी इन सबको उन्हें यथाशीघ्र उपलब्ध कराना ही चाहिये। हम ग्रामीण समाज की मूलभूत आवश्यकताओं से यदि अधिक देर तक आंखें मूंदे रहेंगे तो ग्रामीण और नागरिकों के सम्बन्ध पूर्णतया टूट जायेंगे। ग्रामीण समाज में अपने अधिकारों के प्रति पर्याप्त जागृति उत्पन्न हो चुकी है और अब अपने को जनसेवक कहलाने वालों का यह कर्तव्य है कि वे ग्राम्य जनसमाज की आकांक्षाओं की पूर्ति के प्रभावी उपाय खोजें। यदि हम इस विषय में उपेक्षा बरतेंगे तो देश को एक अभूतपूर्व संघर्ष का सामना करना ही पड़ेगा। □

ं—जैसे पेयजल
स्था आदि यद्यपि
चीज है फिर भी
लब्ध कराना ही
मूलभूत आवश्यक-
खें मूंदे रहेंगे तो
म्बन्ध पूर्णतया टूट
अधिकारों के प्रति
है और अब अपने
यह कर्तव्य है कि
ाओं की पूर्ति के
स विषय में उपेक्षा
संघर्ष का सामना

□



# निहित स्वार्थों से टकराव

□

विप्लव हलीम

□

**इंस्टीच्यूट फार मोटिवेटिंग सेल्फ एम्प्लायमेंट**
**स्थापना वर्ष : १९७४**
**अध्यक्ष : पन्नालाल दास गुप्त**
**कार्यक्षेत्र : पश्चिमी बंगाल, त्रिपुरा, बिहार**

१९७५ के अंत में जब आपातकाल की यातनाएं और आतंक जारी था, उस कठिन परिस्थिति में 'इंस्टीच्यूट फॉर मोटिवेटिंग सेल्फ एम्प्लायमेंट' (इम्से) ने पश्चिम बंगाल के मध्य के मैदानों में बिहार से जुड़े वीरभूम जिले में अपना कार्य प्रारंभ किया। इम्से के कार्यकर्ताओं को इन गांवों में पहले से काम करने का अनुभव था।

इम्से ने सबसे पहले सरदंगा गांव को चुना और उसके लिए एक पूर्णकालिक कार्यकर्ता को वहां भेजा। इम्से की ओर से उसने ग्रामवासियों को बताया कि उसका उद्देश्य अशिक्षितों को पढ़ना-लिखना सिखाना है ताकि वे आत्मनिर्भर बन सकें। सबसे पहले उन्होंने स्थानीय युवाओं के साथ सम्बन्ध जोड़ने की कोशिश शुरू की जिसमें वे सफल भी हुए। ग्राम सभा बनाने के लिए उन्हें गांव वालों से समरस होना पड़ा तथा हर कार्य में सहयोगी की भूमिका निभानी पड़ी। आराम के क्षणों में वह उन्हें देश की गतिविधियों की जानकारी देता।

उन्हीं के प्रत्यक्ष निर्देशन में हमने वहां प्रथम प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र की स्थापना की। धीरे-धीरे सरदंगा के कार्यकर्ताओं के सहयोग से इसके पास-पास के ग्यारह गांवों में संम्पर्क बना। प्रत्येक गांव में एक अध्ययन दल बनाया गया जो कि खोजबीन का काम करे तथा इन गांवों के सामाजिक-आर्थिक ढांचे का विश्लेषण सामने रखे और तब वहां के लिए कार्यक्रम की योजना बनाए। इसके अतिरिक्त शहरों से कुछ और कार्यकर्ता वहां पहुंचे। उन्होंने ग्रामवासियों के साथ मिल-बैठकर राष्ट्रीय मसले पर, घरेलू वातावरण में, चर्चा की और फिर आगे का कार्यक्रम बनाया।

निर्धन ग्रामीणों से एकात्म होने और उन्हें संगठित करने की प्रक्रिया 'इम्से' के कार्यकर्ताओं के लिए सरल नहीं थी। जोतदार, बड़े किसान और महाजन 'इम्से' की गतिविधियों को शत्रुभाव से देखते थे। चूंकि ये सरकारी प्रशासन के निकट और उसके प्रति वफादार होते हैं तथा गांव की अर्थ-व्यवस्था और राजनीति पर भी इन्हीं लोगों का नियंत्रण होता है अतः निर्धन ग्रामीणों को हर तरह से उन्हीं पर निर्भर रहना पड़ता है। जब गांवों में अध्ययन दल और ग्राम समितियां बनीं तब इन्हें

लगा कि इनकी वैकल्पिक शक्ति उभर रही है अतः इनका विरोध बढ़ता गया। प्रारंभिक अवस्था में उपर्युक्त वर्ग के लोग हमारे पास आए और ग्राम-समितियों में शामिल हो गए। लेकिन जब निर्धनों की अधिकांश राय समितियों में मान्य होने लगी और उसी आधार पर कार्यक्रम बनाए जाने लगे तो धीरे-धीरे ये लोग इन समितियों से अलग होने लगे और बाद में ये उसकी विरोधी शक्ति के रूप में खड़े हो गए। इस समय तक 'इम्से' गांवों की जड़ तक पहुंच चुकी थी।

'इम्से' का यह कार्य अब सौ से भी ज्यादा गांवों में फैल चुका है। हमने हर प्रकार के सामाजिक अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए ग्राम-समितियां बनाई हैं। निर्धन ग्रामीणों को आत्मनिर्भर बनाने और उन्हें महाजनी ऋण के भार से मुक्त करने के लिए कई 'खाद्यान्न बैंक' स्थापित किए गए हैं जो पूर्णतः निर्धन ग्रामीणों की सहायता पर आधारित हैं।

इसने निर्धन ग्रामीणों को बहुत साधारण ब्याज पर उपभोक्ता ऋण भी दिए हैं। हमारी सारी गतिविधियां, निर्धन ग्रामीणों पर हो रही यातनाओं, शोषण और अन्याय के विरुद्ध आयोजित की गई हैं ताकि धीरे-धीरे वर्तमान आर्थिक ढांचे को 'ग्रामीण अर्थव्यवस्था' से समाप्त किया जा सके और एक वैकल्पिक आर्थिक व्यवस्था को जन्म दिया जा सके। □

# डालमिया सीमेंट को ग्राम-विकास-परियोजनाएं

भारत सरकार के सहयोग से डालमिया सीमेंट (भारत) लिमिटेड ने ग्रामोत्थान के पुनीत महायज्ञ में भाग लेने का निश्चय १९७९ में किया तथा ग्रामीण भाई-बहिनों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कुछ योजनाओं का श्री गणेश किया।

**पेयजल की व्यवस्था** : ढाई हजार की जन-संख्या वाले गाँव पुलियाम-पट्टी में, जो तमिलनाडु के ओमालुर तालुक के सेलम जिले में हैं जहाँ हमारी कम्पनी की एक शाखा डालमिया मैग्नेसाइट कार्पोरेशन के नाम से स्थापित है, पानी उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गयी। पांच हजार लीटर की क्षमता वाला एक टैंक कुंआ खोदकर स्थापित किया गया। बिजली की मोटर तथा नलके लगाकर पानी ग्रामीणों को उपलब्ध कराया गया। इसी प्रकार की व्यवस्था वन्दरामपालायम गांव में भी, जो लालगुडी तालुक में है, की गयी है।

**स्वास्थ्य सुधार योजनायें** : पुलिया पुट्टी तथा आसपास के ग्रामवासियों के लाभार्थ पुलियाम पट्टी गाँव में एक मिनी हेल्थ सेंटर की स्थापना की गयी है, इसके लिए कम्पनी ने एक नया भवन बनवाया जिसमें चिकित्सा सम्बन्धी उपकरण उपलब्ध कराये गए। तथा तीन वर्ष के लिए लगभग नौ हजार रुपये प्रतिवर्ष दवाईयों तथा दूसरे खर्चों के लिए देना स्वीकार किया।

**व्यवसायिक प्रशिक्षण** : वन्दरामपालायम तथा थप्पई गांव के लोग आत्मनिर्भर हो सकें, वहां के युवक तकनीकी जानकारी प्राप्त कर अपने गांव एवं परिवार को खुशहाल बना सकें, इसी उद्देश्य को सामने रखते हुए दोनों गांवों में व्यवसाय प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की गयी है, जहां युवकों को बढ़ई, लुहार, राजगिरी आदि व्यवसायों में योग्य एवं अनुभवी प्रशिक्षकों द्वारा प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

**पुनर्निर्माण** : थप्पई गांव की गलियों की आवश्यक मरम्मत तथा बच्चों के हित को ध्यान में रखते हुए टूटे-फूटे विद्यालय भवन को पुनर्जीवित किया गया। काल्लाकुडी गांव की सड़क को कम्पनी ने पक्का और सुदृढ़ बना कर मंडियों से जोड़ दिया।

**भावी परियोजनायें** : इन दोनों गांवों को आदर्श गांव के रूप में खड़े करने के लिए उपर्युक्त सुविधाओं के अतिरिक्त व्यवसाय प्रशिक्षण केन्द्रों के विस्तार की योजना है। फसलों की सुरक्षा के लिए दवाई छिड़कने की मशीन प्राप्त कराये जायेंगे। स्कूलों की मरम्मत, छोटे किसान भाईयों के लिए लघु सिंचाई योजना चलाने का भी प्रस्ताव है। □

ो आत्मनिर्भर बनाने
ार से मुक्त करने के
ापित किए गए हैं जो
हायता पर आधारित

बहुत साधारण ब्याज
। हमारी सारी गति-
हो रही यातनाओं,
आयोजित की गई हैं
र्थक ढांचे को 'ग्रामीण
जा सके और एक वैक-
न्म दिया जा सके ।

□

## योजनाएं

ूसरे खर्चों के लिए देना

न्दरामपालायम तथा
निर्भर हो सकें, वहां के
ाप्त कर अपने गांव एवं
सकें, इसी उद्देश्य को
में व्यवसाय प्रशिक्षण
, जहां युवकों को बढ़ई,
सायों में योग्य एवं अनु-
ण दिया जा रहा है ।
व की गलियों की आव-
हित को ध्यान में रखते
न को पुनर्जीवित किया
सड़क को कम्पनी ने
ंडियों से जोड़ दिया ।
न दोनों गांवों को आदर्श
लिए उपर्युक्त सुविधाओं
क्षण केन्द्रों के विस्तार
सुरक्षा के लिए दवाई
राये जायेंगे । स्कूलों की
ियों के लिए लघु सिंचाई
व है । □



# समस्याओं में कैद ग्रामीण-चेतना

□

**बदरी नारायण सोडाणी**

□

स्वतंत्रता के ३३ वर्ष बाद भी आज भारत विभिन्न समस्याओं से बुरी तरह ग्रस्त है। राजधानियों के दफ्तरों में ग्रामीण विकास की बहुत-सी योजनाएं बनती रही हैं, बहुत सारी सैद्धान्तिक विवेचनाएं की जाती रही हैं परन्तु भारत का ग्रामीण लगातार इन लाभों से वंचित रहा। ग्रामीणों को यह भी पता नहीं रहा है कि उनके लिए कोई सरकारी योजना बनी है। इसके लिए ग्रामीणों की समस्याओं के व्यापक और व्यावहारिक अध्ययन का न होना तथा नौकरशाही जिम्मेदार है।

इस संदर्भ में ग्रामीण विकास के कार्यों में महत्वपूर्ण अड़चन यह आती है कि अशिक्षित ग्रामीण, विकास सम्बन्धी योजनाओं के लाभ को समझ नहीं पाता तथा दूसरी ओर सरकारी तंत्र से आतंकित भी रहता है। उधर सरकारी तंत्र योजनाओं का लाभ प्राप्त करने की जिम्मेदारी अपढ़ ग्रामीणों की मानकर निश्चिन्त बैठा कागजी खानापूर्ति में लगा रहता है।

आज अधिकतर गांव के लोग मादक द्रव्यों के सेवन, धूम्रपान आदि व्यसनों के शिकार बने हुए हैं। अभी भी वे लोग आदिम सोच से ग्रस्त हैं। गांवों में बड़ी संख्या में स्कूलों व शिक्षण-संस्थाएं स्थापित हुई हैं परन्तु बच्चों के चारित्रिक उत्थान की ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। स्कूल छिछली राजनीति के अखाड़े बनते जा रहे हैं। इससे गांवों का वातावरण उच्छृंखलतापूर्ण हो गया है। ग्रामीणों की समझ विकसित करने का तो खैर कोई कार्यक्रम अब तक बना ही नहीं है और यदि बना है तो वह उपादेयता की दृष्टि से नगण्य है। नैतिक उत्थान व सदाचरण के प्रति वे लोग अत्यन्त उदासीन हैं।

एक ओर जहां गांवों के आर्थिक, सामाजिक पक्ष के प्रति चेष्टायें नगण्य रहीं वहां दूसरी ओर देश में लगातार हो रहे आम चुनावों व स्थानीय चुनावों ने अनावश्यक राजनीति को गांवों में व्याप्त कर दिया। इस तरह गांव देश के समग्र विकास की धारा से कटकर सिर्फ वोट देने, दलीय छिछली राजनीति, छोटे-छोटे गुटों में विभाजित अखाड़ेबाजी में उलझकर रह गए और यहीं तक अपना दायित्व समझ लिया। हमारे राजनीतिक दलों की ग्रामीण विकास में कोई

**जन कल्याण समिति**
**स्थापना वर्ष : १९७३**
**संस्थापक : बदरीनारायण सोडाणी**
**कार्यक्षेत्र : राजस्थान**

रुचि नहीं है। उन्होंने अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए गांवों को गुटों में विभाजित कर दिया। इस तरह सिर्फ राजनीतिक विवादों में उलझे लोग अपने ही प्रति गलत फहमी के शिकार हो गए और गांधी जी के बाद निरन्तर बढ़ रहे ग्रामीण कार्यकर्ताओं के अभाव ने ग्रामीण विकास के कार्यक्रम को छिन्न-भिन्न कर दिया।

शहरों के प्रति बढ़ते जा रहे आकर्षण ने भी गांवों को उपेक्षित बना दिया है। लोग गांवों के प्रति अरुचिपूर्ण दृष्टिकोण बरतने लग गए। फलस्वरूप सिर्फ नगरों के एकांगी विकास व तेजी से बढ़ रहे औद्योगीकरण ने गांवों की आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था का आधार समाप्त कर दिया तथा परम्परागत लघु एवं कुटीर उद्योगों का ह्रास होने से बेरोजगारी बढ़ गयी जिससे ग्रामीण विकास के कार्यों में भारी बाधा उपस्थित हो गयी।

मेरा यह अनुभव रहा है कि ग्रामीण जन अपने स्वास्थ्य के प्रति भी इतने लापरवाह रहते हैं कि जब तक कोई रोग उन्हें पूरी तरह दबा नहीं लेता, वे उसका इलाज नहीं कराते। ग्रामीण लोग जनस्वास्थ्य से सम्बन्धित प्राथमिक ज्ञान से अनभिज्ञ हैं। कूड़ा-करकट, मैला, गोबर आदि के ढेर बस्ती के बीचों-बीच लगे रहते हैं। मल-मूत्र पर मिट्टी डालना वे जानते नहीं। यदि उन्हें सिखाया भी जाता है तो गंभीरता से नहीं लेते, अतः उन्हें बार-बार समझाने की आवश्यकता है क्योंकि उनके पास अभी फ्लश लैट्रीन बनाने या कचरा पात्र बनाने लायक साधन नहीं हैं। अतः उनमें सार्वजनिक स्वास्थ्य के प्रति चिंतन उत्पन्न करना जरूरी है।

रूढ़िग्रस्त ग्रामीण समाज जहाँ सामाजिक बुराइयों से बुरी तरह ग्रस्त है वहाँ दूसरी ओर सामाजिक उत्थान के सामूहिक प्रयासों के प्रति तटस्थ रहने की विडम्बना भी उसके साथ जुड़ी हुई है। रीति-रिवाजों आदि के पालन में तो वह समाज के साथ बहुत मन लगाकर प्रयत्न करता है। यदि किसी रस्म-रिवाज का पालन नहीं हो रहा है तो वह तुरंत उनका विरोध करता है, परन्तु ग्रामीण विकास के कार्य में उसका सहयोग मांगा जाए तो वह उसे झंझट समझता है। सरकारी अनुदानों व अन्य सरकारी विकास योजनाओं को वह निर्लिप्त भाव से देखता है। इसके मूल में सबसे बड़ा कारण तो यही है कि सरकारी अफसरों या कर्मचारियों ने ग्रामीणों का सहयोग कभी चाहा ही नहीं।

हमने जन-कल्याण समिति की ओर से पिछले अरसे से गांवों में कुछ चेतना लाने का प्रयास किया है जिससे उनकी समझ विकसित हो सके और वे स्वयं के बारे में सोच सकें। जैसे मैले पर मिट्टी डालना, मुंह साफ रखना, स्नान करना, सप्ताह में एक बार पूरे गांव की सफाई करना, नशाबन्दी, खर्च मौसर नहीं करना आदि कार्यक्रम चलाए गए हैं। कुछ अन्य संस्थाएं भी ग्रामीण विकास में रुचि रखती हैं परन्तु यह सब प्रयास गांवों में बस रही विशाल जनसंख्या के लिए नगण्य है। वस्तुतः सरकारी ग्रांटों व अन्य प्रकार की ग्राम-विकास योजनाओं में हम जब तक ग्रामवासियों को भी भागीदार नहीं बनायेंगे तब तक ग्राम विकास की योजनायें अधूरी नहीं अपितु प्रभावहीन भी रह जायेंगी। □

**तीनों लोकों में ऐसा कुछ भी नहीं है, जो उद्वेगरहित पुरुषार्थ से प्राप्त न किया जा सकता हो।**

# वनवासी संस्कृति मिटे नहीं

□ पी० के० पटनायक
महासचिव

सर्वोदय सेवा समिति
स्थापना : १६ नवंबर, १९५५
कार्यक्षेत्र : क्योंझर, उड़ीसा
संबद्ध : भारतीय आदिम जाति संघ, नई दिल्ली

पैंतीस वर्षों से ज्यादा लंबे समय के दौरान सर्वोदय सेवा समिति ने आदिम जातियों और ग्रामवासियों के जीवन-व्यवहार में सुधार लाने का सतत प्रयास किया है। आज यह लगता है कि स्थापना काल से अब तक परिस्थितियों में जमीन-आसमान का अंतर आया है। अब जगलों की पगडंडियों पर नंगे पांवों के बजाय वहां बनी सड़कों पर बसों के टायरों के निशान देखने को मिलते हैं। घने-अंधेरे वाले जंगलों की सम्पत्ति ने शहरी लोगों को अपनी ओर आकर्षित किया है। वनवासी जातियों के पुरुष और महिलाएं भी अब लेन-देन की भाषा समझने लगे हैं। कम से कम काम करके अधिक से अधिक कमाने की भावना अब उन तक भी पहुंच रही है।

हमारा उद्देश्य वनवासी संस्कृति के स्थान पर शहरी सभ्यता को प्रतिस्थापित करना नहीं है, अपितु मानवीय दृष्टिकोण से वहां उपयोगी सुधार लाना है। अनुभव से ऐसा लगता है कि आज की समस्याओं की जड़ें ग्रामीण या वनवासी समाज में न होकर तथाकथित विकसित समाज में हैं। शुरू के दिनों में ही हमें यह पता चल गया था कि वनवासी जातियों व ग्रामीणों का न केवल सामाजिक जीवन और मनोवैज्ञानिक स्थितियां बल्कि सामान्य शक्ति और व्यक्तित्व भी शहरी लोगों से कहीं बेहतर है। हमारे लिये यह एक दुःखद अनुभव था कि शहरी लोगों के सम्पर्क में आने से दूर-दराज क्षेत्रों में बसे लोगों पर अच्छा प्रभाव कम और बुरा असर ज्यादा पड़ता था। हमारे सामने यह एक बड़ी चुनौती थी। इसीलिये हमने निश्चय किया कि हालांकि हमने अपना कार्य-क्षेत्र ग्रामीण मात्र को चुना है परंतु उसके विकास की योजना राष्ट्रीय पुनर्रचना के व्यापक परिप्रेक्ष्य में बनानी होगी।

व्यावहारिक क्षेत्र में हमने देखा कि लोग केवल शिक्षा देने से ही नहीं सीखते, न ही हमारे कहने मात्र से कहे अनुसार व्यवहार करने लगते हैं। अपनी अपेक्षाओं और भावनाओं के अनुरूप उन्हें ढालने के लिये केवल कथनी से काम नहीं चलता। वे तो आचरण का अनुकरण करते हैं। सामाजिक-कार्यकर्ताओं और सुधारकों के जीवन के उदाहरण से वे सीखते हैं। हमारे पास ऐसे स्पष्ट व ठोस उदाहरण हैं जिनसे पता चलता है कि वे लोग बिना कहे, निवेदन किये या सिखाए-पढ़ाए उस व्यक्ति का अनुकरण करते हैं जो स्वयं एक आदर्श-जीवन जीता है और उनसे प्यार करता है। केवल दिखावे के आदर्शवाद की ओर उनका ध्यान आकर्षित नहीं होगा।

अनुभव के आधार पर हम कह सकते हैं कि यदि एक स्वस्थ राष्ट्रीय सामाजिक वातावरण का निर्माण करना है तो ग्रामीण जन सामान्य के सामने त्याग के आदर्श प्रस्तुत करने होंगे। अपनी कमियों को छिपाने की नहीं बल्कि मिटाने की आवश्यकता है। एक अन्य बात यह कि हमारा जोर संख्या पर न होकर गुणात्मक होना चाहिये।

एक सामाजिक कार्यकर्ता को लोगों के बिल्कुल निकट जाना पड़ेगा। उनकी संस्कृति और परंपराओं में घुल-मिल जाना होगा। उनकी भावनाओं, विश्वासों, व्यवहार आदि को सबसे पहले समझना होगा। जब तक बीमारी के लक्षणों को न पकड़ लें इलाज करना ठीक नहीं होगा। परंतु आज की समाज पुनर्रचना का दुर्भाग्य यह है कि हम रोगी को वह दवाई देते हैं जो हमें उपलब्ध और सुविधाजनक होती है। वास्तव में सामाजिक कार्यकर्ताओं को क्रांतिकारी या कवि नहीं बनना है बल्कि उन्हें तो ऐसे शक्तिशाली विद्युत कणों की तरह काम करना है कि उत्थान की मशीन जोरों से चल पड़े। वे लोग क्रांति के मसीहा नहीं बल्कि उत्थान के पालक और वाहक हैं। □

# 'कर्म' में से उपजा विकास का दर्शन

▣ बी० एन० देशपाण्डे

□ सचिव

> **वेरला डेयरी प्रकल्प समिति और ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाएं समिति**
> स्थापना : १९७५-७६
> कार्यक्षेत्र : सांगली (महाराष्ट्र राज्य)

सांगली के विलिंडन कालेज के प्राध्यापक श्री बी० एन० देशपांडे द्वारा आरम्भ किये गये ग्राम विकास कार्य में हम किसानों का समूह संलग्न है। हमारे पास ग्रामीण विकास का कोई दर्शन नहीं था। सब कुछ हमने प्रत्यक्ष अनुभवों के आधार पर ही आरम्भ किया। १९७० से ७३ की अकाल अवधि में श्री देशपांडे जी 'कासा' द्वारा चलाये गये "काम के बदले अनाज" कार्यक्रम के स्थानीय प्रतिनिधि थे। इस सहायता कार्यक्रम की समाप्ति के बाद हमने १९७५-७६ में करीब ५ मील के अर्द्धव्यास में फैले १९ गांवों और ४२००० लोगों के ग्रामीण परिवारों के लिए आर्थिक व शारीरिक विकास के लिए कार्य करने का निश्चय किया और दो पंजीकृत समितियों का निर्माण किया : वेरला डेयरी प्रकल्प समिति और ग्राम स्वास्थ्य सेवाएं समिति। अन्तर्राष्ट्रीय सहायक संस्थाओं की सहायता से हमने कमालपुर में केन्द्रीय डेयरी फार्म व रामपुर में ग्रामस्वास्थ्य केन्द्र स्थापित किये।

हमने पशुचिकित्सा-सेवाओं और चिकित्सालय से कार्यारम्भ किया। बाद में हमने कृत्रिम गर्भाधान-सेवाएं भी शुरू कर दीं। फिर चारा विकास कार्यक्रम हाथ में ले लिया। दुग्ध विपणन सेवाएं हमने पिछले वर्ष ही आरम्भ की हैं।

स्वास्थ्य कार्यक्रम के अन्तर्गत हमारे पास दो स्थायी डाक्टर, नर्स, व कम्पाउंडर हैं, जिनके द्वारा दो ग्राम स्वास्थ्य केन्द्र, एक रामपुर में व दूसरा देवराष्ट्री में चलाये जा रहे हैं तथा पर्याप्त संख्या में ग्राम स्वास्थ्य कार्यकर्ता हैं जो लगभग १६००० जनसंख्या की देख-रेख कर रहे हैं।

डेयरी समिति के अन्तर्गत हमारे पास एक कार्यकारी पशुचिकित्सक, दो कृषि निरीक्षक, एक कृत्रिम गर्भाधान तकनिशियन, तीन लेखा निरीक्षक, एक प्रशिक्षित समाज सेवक व अन्य अनेक कार्यकर्ता हैं। हमारे पास एक बिजली की कुट्टी की मशीन, एक गोबर गैस संयंत्र और प्रदर्शन के लिए अच्छी गायों का समूह है तथा ग्रामीण युवकों के प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षण केन्द्र हैं।

स्वास्थ्य कार्यक्रम के अन्तर्गत हमारे डाक्टरों द्वारा जन्म से पूर्व के ५२%केस सुलझाये गये हैं तथा ६०% ६ साल तक के बच्चों को टीके इत्यादि लगाये गये हैं। प्रोटीन कैलोरी की पूर्ति के लिए हम एक पौष्टिक भोजन केन्द्र (२७५ बच्चों के लिए) भी चला रहे हैं। हर साल करीब एक दर्जन खराब हालत में पहुंचे हुए मरीज हमारे स्वास्थ्य केन्द्रों द्वारा बचाये जाते हैं। हमारे कुछ गांवों में बहुत से रोगों का जनक गन्दा पानी होने के कारण हमने २ गांवों में पांच कुंए खुदवाए हैं और तीसरे गांव में पाइपों द्वारा पानी पहुंचाने की योजना चलाई है। हम समय समय पर मिराज से विशेषज्ञों को बुला कर स्वास्थ्य कैम्प भी लगाते हैं।

डेयरी समिति की तरफ से हम एक पशु चिकित्सालय और एक कृत्रिम गर्भाधान सेवा केन्द्र भी चला रहे हैं। हम गाय ओर भैंसों के लिए वातानुकूलित तरीकों से वीर्य पदार्थ भी रखते हैं। आस-पास के गांवों में हमारे तकनीशियन नियमित रूप से जाते हैं। हमारे द्वारा चलाये जा रहे चारा विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत हमारे पास १२ एकड़ जमीन व बीज प्लांट हैं। हमने चारे की बहुत-सी किस्में उगाई हैं। हमने १ लाख से ज्यादा बबूल के पौधे उगाये और किसानों में उन्हें मुफ्त वितरित किया।

दूध एकत्रीकरण योजना के अन्तर्गत हम ९ गांवों के दूध केन्द्रों पर किसानों से दूध इकट्ठा करते हैं और हर सप्ताह उनके दूध के गाढ़ेपन की मात्रा के हिसाब से उन्हें भुगतान करते हैं। प्रत्येक दुग्ध उत्पादक को एक पुस्तिका दी जाती है, जिसमें उसके दूध का मात्रा, गाढ़ेपन का प्रतिशत, दर

ff
ted
3089 IDI IN
TE/NYLON
ESTER



इत्यादि विवरण प्रतिदिन लिखे जाते हैं। दूध उत्पादक हमारी समिति से पशुओं का चारा, उर्वरक इत्यादि उधार ले सकते हैं। किसानों को बैंकों से जोड़ने की हमारी प्रक्रिया में बैंक ऑफ इण्डिया ने किसानों को दुधारू पशुओं को खरीदने के लिए ऋण देना आरंभ कर दिया है। कुछ किसानों, जिनके पास ऋण प्राप्त करने के लिए सीमांत धन भी नहीं हैं, हमारी समिति अप्रत्यक्ष रूप से उनकी जमानत देती है।

अब तक बैंक में हमारे द्वारा प्रयोजित सीमित मामलों में एक भी ऐसा मामला नहीं हुआ है, जिसमें बाद में भुगतान न किया गया हो। कुछ मामलों में किसानों को अपने क्षेत्रों में चारा उगाने के लिए हम अधिक सुविधाएं उपलब्ध करा के उनकी सहायता करते हैं। ये सभी सेवाएं छोटे-छोटे क्षेत्र में शुरू की गईं, इसीलिए ये अधिक कार्यकुशल सिद्ध हुईं।

प्रथम वर्ष के अनुभव ने हमें यह अहसास कराया कि हमारे क्षेत्र में एक कार्यकुशल तथा विश्वसनीय सेवा केन्द्र की बहुत आवश्यकता है। हमारे क्षेत्र में सहायक व सरकारी सैक्टर में पनपती सेवाओं पर हमने विश्वास किया और इसी कारण हमें बहुत सी कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ा—उदाहरणार्थ—हमारी केन्दीय डेयरी फार्म की योजना बीच में ही समाप्त हो गयी।

अभी तक हमने अपनी दोनों समितियों में सदस्यों की संख्या बहुत थोड़ी रखी है। सचिव के अतिरिक्त और कोई भी सदस्य ऐसा नहीं है जो दोनों समितियों में सदस्य हो। सदस्यों की छोटी संख्या के कारण ही हम इसे स्थानीय राजनीति से दूर रख पाने में सफल हुए हैं। □

# समग्र ग्राम विकास का एक प्रयास

**जनशिक्षा प्रचार केंद्र**
**स्थापना : १९७३**
**कार्यक्षेत्र : प० बंगाल**

इस संस्था ने सर्वप्रथम अनौपचारिक शिक्षा का अपना कार्य पश्चिमी बंगाल के हुगली जिले के एक ग्राम बंगाडा में १९६२ से प्रारम्भ किया। एक नया प्रकल्प होने के नाते ग्रामवासियों ने इसका स्वागत किया। कुछ ही वर्षों में इस प्रकल्प को सात अन्य गांवों—कपरपुर, चंचुआ, डिंगलहाटी, प्रसादपुर, कोटलपुर, गणेशवाटी और कामरेवपुर में भी चालू कर दिया गया। केन्द्र ने अनुभव किया है कि ग्रामों में विकास-कार्य अनौपचारिक-शिक्षा के साथ-साथ ही चलाया जाना चाहिये। इसी कारण केन्द्र ने भारत तथा अन्य अनेक देशों में विविध विकास कार्यों में संलग्न एक मिशनरी संगठन 'लूथरन वर्ल्ड सर्विस' नामक संस्था के सहयोग से १९७६ में तीन गांवों में यथासंभव विकास कार्य प्रारम्भ किया।

अब तक केन्द्र निम्नलिखित कुछ कार्य कर चुका अथवा कर रहा है :—

१. दरिद्रतम ग्रामीणों के लिये गारे की दीवारों एवं ईंटों के फर्श वाले ३६ मकानों का निर्माण।
२. १२ सिलंडर पम्प ट्यूब वैल तथा दो कुंओं का निर्माण।
३. काम के बदले अनाज कार्यक्रम के अन्तर्गत तालाबों तथा मुख्य मार्ग से ग्राम का सम्पर्क जोड़ने वाले मार्गों का निर्माण।
४. बकरी, सुअर एवं मुर्गीपालन के लिये इनकी व्यवस्था।
५. ताड़ के पत्तों, गन्नों तथा बांसों से टोकरियां तथा अन्य सामान बनाने के साथ-साथ रेशे से रेशम बनाने का प्रशिक्षण।
६. मिश्रित खाद-निर्माण तथा हथकरघों पर कार्य का प्रशिक्षण।
७. जीर्ण-शीर्ण अवस्था में पड़े दो प्राइमरी स्कूलों और एक जूनियर हाई स्कूल का जीर्णोद्धार।
८. एक होमियोपेथिक चैरिटेबल डिस्पैंसरी की व्यवस्था।

निर्धन ग्रामीणों की सहायतार्थ उनके बच्चों के लिये वस्त्र, कम्बल आदि के मुफ्त वितरण की समय-समय पर व्यवस्था की जाती है। □

# उपेक्षितों का उत्थान

□

**शंकर कुमार सान्याल**

□

**हरिजन सेवक संघ**
**कार्यक्षेत्र : पश्चिमी बंगाल**
**स्थापना : ३० सितंबर, १९३२**
**संस्थापक : महात्मा गांधी**

३० सितंबर, १९३२ को पंडित मदन मोहन मालवीय की अध्यक्षता में बंबई में हुई एक विशाल जनसभा में "हरिजन सेवक संघ" की नींव का पहला पत्थर रखा गया। हिंदू समाज से तथाकथित अछूतों को अलग करने के ब्रिटिश सरकार के प्रयास के विरोध में महात्मा गांधी ने पूना के पास यरवदा जेल में अनशन किया था। उसी के फलस्वरूप इस संस्था का जन्म हुआ। इसका काम हरिजनोद्धार और छूत-छात का सत्य और अहिंसा के रास्ते से निवारण करना है। "संघ" का काम अब देश के लगभग हर प्रांत तक फैल चुका है।

ग्राम-विकास का हमारा कार्य चार बड़े क्षेत्रों में चलता है। दुर्गापुर (आम्टा), (हावड़ा जिला), नंदी ग्राम, (बांकुरा जिला), संत्तीगढ़ (झारग्राम) (मिदनापुर जिला) और खाटंडा, (वीरभूम जिला)। इसके अलावा कुछ अन्य छोटे गांवों को मिलाकर पश्चिम बंगाल के लगभग सौ गांवों में हमारी योजनाएं चल रही है।

हमने ऐसे गांवों का चयन किया है जहां भुखमरी है और हरिजन तथा पिछड़ी व कमजोर जातियों के लोग ज्यादा संख्या में हैं। इन स्थानों पर हमारा पुराना संगठनात्मक आधार है और समर्पित कार्यकर्ताओं की टीम है।

हावड़ा जिले में दुर्गापुर के आम्टा क्षेत्र की हालत यह है कि पिछले १५ सालों में वहां पर ९ बार विनाशकारी बाढ़ आई है जिसने वहां के निवासियों के घर-बार, खेत-खलिहान सब कुछ बर्बाद कर दिये। इस क्षेत्र में हमारे कार्यकर्ताओं की टोली ४० वर्षों से ग्रामवासियों के उत्थान में जुटी है। हमने एक वर्ष में तीन फसलें उगाने का इंतजाम किया है जिसके लिए नलकूपों की व्यवस्था की गई है। गांव वालों को कृषि के लिए आधुनिक यंत्र प्रदान किए गए हैं। अच्छे बीज और खादें खरीदने के लिए सहकारिता के आधार पर ऋण-व्यवस्था है। हमारा अनुभव है कि २० से २५ प्रतिशत तक ऋणों का वापस भुगतान हुआ है जिनमें सहकारी समितियों को दिए गए ४ लाख रुपये तक की राशि के ऋण भी शामिल हैं। पशुपालन व मुर्गीपालन इत्यादि कामों के लिए ब्याज रहित ऋण

भी दिये गए हैं। सभी योजनाओं में गांव वाले स्वेच्छा से भाग लेते हैं। एक बार ऐसा भी हुआ कि ऋण का भुगतान न होने पर हमने "ग्रामसमिति" की शरण ली। उस व्यक्ति का सामाजिक बहिष्कार किया गया और उसे धन लौटाने को एक प्रकार से विवश होना पड़ा। गांव के हर परिवार से हमारा संपर्क है। हम दवाओं के मुफ्त वितरण का एक केंद्र भी चलाते हैं जिसके फलस्वरूप गांव के प्रत्येक परिवार से हमारा संबंध स्थापित होता है।

हमें विभिन्न राजनैतिक दलों के विरोध का हमेशा सामना करना पड़ता रहा है क्योंकि गांव में हमारे प्रकल्प की लोकप्रियता के कारण उन्हें अपना प्रभाव समाप्त होने की आशंका हो जाती है। ऐसी बाधाएं पश्चिमी बंगाल में अन्य समाज कल्याण संगठनों के सामने भी आती हैं।

मिदनापुर जिले के एक अविकसित क्षेत्र झारग्राम के हमारे अनुभव भी उल्लेखनीय हैं। यहां लोढ़ा नाम के लोग रहते हैं जिनका काम ही चोरी करना और डाके डालना था। हमने उनसे यह काम छुड़ा कर उन्हें जंगलों से पेड़ काटकर लकड़ी बेचने व कुछ जंगली फल तोड़ने के काम में लगाया। इस क्षेत्र में चोरियां काफी कम हो गईं। परंतु बाद में सरकार ने जंगलों को अपने नियंत्रण में ले लिया तो ये लोग फिर से उसी पुराने काम में लग गए।

लोढ़ा लोगों के पुनर्वास के लिए हमने ४०० बीघा जमीन पर "सतीगढ़ विकास प्रकल्प" शुरू किया। उन्हें संगठित व संस्कारित किया। समर्पित कार्यकर्ताओं की मदद से उन्हें शिक्षा दी और खेती के अच्छे तरीके सिखाए। हमने कुछ भवनों आदि का भी निर्माण किया, उन्हें विभिन्न प्रकार का प्रशिक्षण दिया और एक धर्म गोला में ६०० मन धान भी एकत्रित किया।

१९६८ मे एक दुर्भाग्यपूर्ण दिन एक राजनैतिक दल के लोगों ने उस क्षेत्र में छापा मारा, भवनों को गिरा दिया और धर्मगोला से धान लूट लिया। हमारे कार्यकर्ताओं ने इन अत्याचारों से रक्षा के लिए कई लोगों के दरवाजे खटखटाए, पर कोई भी राजनैतिक दल के विरुद्ध खड़ा होने को तैयार नहीं हुआ। इस घटना के दस साल बाद तक हमारे कार्यकर्ता लोढ़ाओं के सुधार के लिए कुछ करने का साहस नहीं जुटा पाए। अब वे लोग पहले से ज्यादा संगठित हैं और उन्होंने हृदय से हमसे उनके लिए कार्य करने का निवेदन किया है। हालांकि आज वे लोग पूरी तरह सुधर चुके हैं तो भी उनके इतिहास ने उनका पीछा नहीं छोड़ा है और उन्हें पुलिस व अन्य लोगों से प्रताड़ना सहनी पड़ती है। परिणामस्वरूप उनके मन में एक हीन भावना घर कर गई है। हरिजन सेवक संघ ने इसीलिए इन उपेक्षित नागरिकों के उत्थान का बीड़ा उठाया है। इस काम में पैसे की कमी बराबर खटकती रही है। हमने सब लोगों से सहायता के लिए अपील की है। कुछ स्वयंसेवी संगठन मदद के लिए आगे भी आए हैं परंतु जितनी वास्तव में आवश्यकता है उससे यह मात्रा काफी कम है।

स्वयंसेवी संगठनों को भविष्य में ग्राम-विकास-कार्यों में गांवों में रहने वाले इस प्रकार के कमजोर वर्गों पर ध्यान देना चाहिए। इनके लिए मनोवैज्ञानिक तरीके से काम करने की आवश्यकता है। वह दिन दूर नहीं जब इस काम के लिए पर्याप्त आर्थिक सहायता प्राप्त होगी। □

# चंबल की खौफनाक घाटियों में

□

एस० एन० सुब्बाराव

□

**महात्मा गांधी सेवा आश्रम**
**कार्यक्षेत्र : चंबल घाटी, मध्य प्रदेश**
**स्थापना : १९६०**

महात्मा गांधी सेवाश्रम मध्य प्रदेश में जौरा नामक स्थान पर चंबल घाटी के उस भाग में है जहां खूंखार डाकुओं ने जयप्रकाश नारायण की प्रेरणा से अप्रैल १९७२ में महात्मा गांधी की प्रतिमा के सामने आत्मसमर्पण किया था। उसी समय से ही हम लोग उस कार्य को आगे बढ़ाने में जुटे हुए हैं।

वास्तव में चंबल घाटी में यदि किसी उद्देश्य-पूर्ण कार्यक्रम को सफल बनाना है तो इसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस क्षेत्र की सदियों से चली आ रही डाकू-समस्या पर कुछ न कुछ असर जरूर होना चाहिए। हमारे ग्राम-विकास-कार्यक्रम पर भी उस का प्रभाव है क्योंकि इस क्षेत्र के लोगों के विकास की पहली जरूरत डाकुओं के भय से मुक्ति पाना है। डाकुओं के दिन-ब-दिन पैदा होते नए गिरोहों पर काबू पाना भी उतना ही जरूरी है। चंबल घाटी की एक अन्य विशेषता है कि वहां बीहड़ फैले हुए हैं। कई-कई जगह तो २०० फुट गहरे गड्ढे हैं। एक अध्ययन के अनुसार सरकार हर साल सिर्फ ६०० एकड़ भूमि को उपयोगी बनाने का प्रयास कर पाती है और २००० एकड़ भूमि हर साल पानी के बहाव से नए बीहड़ों को जन्म देती है। जहां एक ओर किसानों के लिए हर वर्ष भूमि और कम हो जाती है डाकुओं के रहने के लिए नए बीहड़ पैदा हो जाते हैं। इन विशेषताओं के अलावा चंबल में हर वह कठिनाई देखने को मिलती है जो देश के किसी भी अन्य गांव में पायी जाती है। चंबल के अपने कानून हर रोज नए अपराधियों को जन्म देते हैं। मजे की बात यह है कि साढ़े दस लाख की आबादी वाले मुरैना जिले में लगभग ४६,००० लाइसेंस शुदा हथियार हैं, इसके अतिरिक्त गैर-लाइसेंस शुदा हथियारों को मिलाकर हत्या और लूटमार का पर्याप्त वातावरण तैयार हो जाता है। पुश्तैनी और पारिवारिक झगड़े तो मानो चंबल घाटी की मिट्टी में हैं। भाई का भाई से बैर, यहां तक कि पिता और पुत्री की दुश्मनी···रिश्ते जितने गहरे उतना ही अधिक द्वेष। ज्यादातर इसकी वजह भूमि और सम्पत्ति पर अधिकार और सिंचाई होती है। यहां की मान्यता है कि किसी भी गांव वाले का सबसे बड़ा अपमान यह है कि उसे पुलिस द्वार

हथकड़ी लगा दी जाए। इसीलिए पुलिस को झगड़ों में घसीट लिया जाता है, और लोगों को एक दूसरे के खून का प्यासा बनने में देर नहीं लगती।

इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए पहला कार्यक्रम जो आश्रम ने हाथ में लिया वह १६ वर्ष से अधिक आयु के नवयुवकों के लिए ६ मास का एक प्रशिक्षण कोर्स था। वे लोग तो जैसे इसके लिए तैयार ही थे। इस पाठ्यक्रम का दोहरा उद्देश्य था। १. युवकों को ऐसे शिल्प का प्रशिक्षण देना कि वे अपनी आजीविका कमा सकें। २. उनमें अपने गांवों में युवकों को संगठित करने के गुणों का विकास करना। ये ग्राम विकास कार्यक्रम की प्राथमिकतायें थी।

इस बात से थोड़ा धक्का अवश्य लगा कि युवकों ने केवल तीन व्यावसायिक विषयों १. ट्रैक्टर, २. बिजली की फिटिंग्स और ३. दर्जी का काम को ही चुना वैसे उन्हें योगासन, ध्यान, सामूहिक प्रार्थना, सामूहिक ग्रामीण खेल, राष्ट्रप्रेम व भक्ति के सामूहिक गायन, ग्रामीण शिविर और सड़क बनाने आदि के प्रकल्प जैसी गतिविधियों में भी भाग लेने का अवसर मिलता है।

हमें लगता है कि उन्हें छोटे-छोटे काम—जैसे कपड़ा बुनना, साबुन बनाना वगैरह भी सिखाये जाने चाहिए। उपरोक्त तीन पाठ्यक्रमों में अब तक १२३ नवयुवक प्रशिक्षित किये जा चुके हैं। हालांकि कुछ युवक तो केरल, कर्नाटक व बंगाल जैसे सुदूर प्रांतों से भी आए हैं परन्तु अधिकांश चंबल क्षेत्र के ही निवासी हैं।

गांधी जी के विचारों के अनुरूप हमने चंबल क्षेत्र में शांति सेवा की इकाइयों की स्थापना की है। इन इकाइयों में खेल-कूद, विभिन्न विषयों पर चर्चा इत्यादि के अलावा सामुदायिक रूप से सेवा कार्यों को भी प्रोत्साहन दिया है। उदाहरण के तौर पर गांव वालों की मदद से सड़कें तैयार करने की योजना बनी। झगड़े आदि की स्थिति से निबटने के लिए केवल एक कार्यकर्ता वहाँ रहता था। शेष सारा कार्य गांव वालों ने खुद किया। दो वर्षों के दौरान २७ सड़कों का निर्माण हुआ। सबसे बड़ी बात यह थी कि लगभग हर गांव वाले को यह लगा कि वह भी इस काम में शामिल है। इसी काम के आधार पर जन-समितियों, की स्थापना हुई।

शुरू में आश्रम बैंक की सहायता से गांव वालों को ऋण देता था। जब यह लगा कि सारा लाभ केवल धनी लोग उठा लेते हैं तो तरीका बदला गया। छोटे-छोटे भूमि के टुकड़ों के बीच सामूहिक सिंचाई के उद्देश्य से कुंए खोदे गए। बदले में किसानों से केवल दो बिस्वा भर भूमि का हिस्सा दान में मांगा गया। अब तक २३ कुंए खोदे जा चुके हैं जिनसे अनेक छोटे किसानों को लाभ पहुंचा है।

चंबल के भू-भाग का एक पहलू यह भी है कि वहां ढेरों भूमि बेकार पड़ी है। हालाँकि यह बहुत उपजाऊ है पर पहले इसे खेती लायक बनाना पड़ता है। युवकों की मदद से इस दिशा में भी कार्य किया गया।

हमारे युवा शिविर लोकप्रिय हो रहे हैं। अब दस दिन के राष्ट्रीय शिविर लगाये जाते हैं। प्रतिवर्ष २०० युवक-युवतियों के लगभग दस शिविर चंबल के बीहड़ों में आयोजित किये जाते हैं। २५ से अधिक राज्यों और बाहर के कुछ देशों से भी प्रतिनिधि भाग लेते हैं। आत्मानुशासन के वातावरण का निर्माण करने, आत्मनिर्भर बनने, सहनशक्ति का विकास करने, शारीरिक श्रम की महत्ता को समझने और राष्ट्रीय एकात्मकता की भावना बढ़ाने में इन शिविरों का भारी योगदान रहता है। □

---

जेठ हो कि पूस हो, हमारे कृषकों को आराम नहीं है,
छुटे बैल से संग, कभी जीवन में ऐसा नाम नहीं है।
मुख में जीभ, शक्ति भुज में, जीवन में सुख का नाम नहीं है,
वसन कहां ? सूखी रोटी भी मिलती दोनों शाम नहीं है।

—रामधारी सिंह "दिनकर"

# खादी और ग्रामोद्योग : क्रांति का मार्ग

□

वी० टी० मागदी

□

**कर्नाटक खादी ग्रामोद्योग संयुक्त संघ**
**स्थापना : ७ नवम्बर-१९५७**

आजादी से पहले ही महात्मा गांधी से प्रेरणा पाकर मैंने कुछ सहयोगियों के साथ मिलकर धारवाड़ जिले में होसरिट्टी नामक स्थान पर भारतीय तरुणार संघ की स्थापना की थी ताकि ग्रामोत्थान के द्वारा गरीबों का उद्धार किया जा सके। इस उद्देश्य से हमने वहां एक गांधी सेवाश्रम की भी स्थापना की। अपने कार्यक्रमों की सिद्धि के लिये हमने गांव वालों के साथ घुल-मिलकर कार्य करना शुरू किया। हमें लगा कि गांवों में निर्धनता का एक बड़ा कारण बेरोजगारी व अर्ध रोजगारी है। हमने गांव के खाली हाथों को काम देने के लिए खादी उद्योग शुरू किये। आस-पास के गांवों में चरखे वितरित किये गए। लोगों से अपनी बुनी खादी पहनने को कहा गया। लगभग २० गांवों में हमें इस दिशा में सफलता भी मिली।

स्वास्थ्य रक्षा गांववालों की एक अन्य समस्या थी। मैं स्वयं एक चिकित्सालय में डाक्टर रह चुका था। अतः एक छोटा और सस्ता दवाखाना शुरू किया गया। मैं साइकिल पर गांवों में घूम घूमकर लोगों को स्वास्थ्य संबंधी बातों की जानकारी देता था। छोटी-मोटी बीमारियों का सरलता से उपलब्ध आयुर्वेदिक व अन्य प्रकार की दवाओं से इलाज करने से गांव वालों से निकटता का संबंध स्थापित हुआ।

'कर्नाटक खादी ग्रामोद्योग संयुक्त संघ' की स्थापना हुबली में १९५७ में की गई। आज देश में इससे संबद्ध ३५ खादी संस्थाएं काम कर रही हैं। यह लोगों से खादी खरीदकर उसे धोने, रंगने, छपाई करने आदि के काम करता है तथा उसे बाजार में उपयुक्त स्थान पर बेचता है। यह अन्य संस्थाओं का मार्गदर्शन भी करता है। संघ की कुल सालाना बिक्री दो करोड़ रुपये की है। अन्य संबद्ध संस्थाओं की सहायता के माध्यम से भी गांवों में हजारों गरीब कारीगरों को काम दिया गया है।

खादी के क्षेत्र में लगभग पांच दशकों के अनुभव से मैं यह कह सकता हूं कि इस क्षेत्र में प्रगति की गति बहुत धीमी है। वास्तव में खादी और ग्रामोद्योगों में बिजली का प्रयोग शुरू होना चाहिये। अंबर चरखे का विद्युतीकरण कर उसे देश भर में सुलभ कराए जाने की आवश्यकता है।

इसके साथ-साथ साबुन, खाद्य-तेल, माचिस इत्यादि उद्योगों का विकेन्द्रीकरण कर उन्हें छोटे पैमाने पर लोगों तक पहुंचाना होगा। हमारा अनुभव है कि गोबर गैस संयंत्रों का राष्ट्रव्यापी विस्तार एक क्रांति ले आएगा। घरेलू ऊर्जा की विकराल समस्या का यही इलाज है।

कर्नाटक में हमारा संघ गैस संयंत्र योजना में अग्रणी रहा है। हमने अब तक राज्य में १००० संयंत्र चालू किये हैं जिनका गृहिणियों ने खुले दिल से स्वागत किया है। साधारणतया गांववाले इसके लिए हमारा आभार मानते हैं। परंतु यह काम सरकार के माध्यम से बड़े पैमाने पर किया जाना चाहिये। □

# पहले लोगों को बदलना होगा

□ गोकुल चंद विश्वास
□ अमिय कुमार रॉय

**लोक सेवा समिति**
**कार्यक्षेत्र : मिदनापुर, बंगाल**
**स्थापना : १९५७**
**संस्थापक : अन्नदा प्र० चौधरी**

लोक सेवा समिति की स्थापना स्वर्गीय अन्नदा प्रसाद चौधरी ने की थी। उन्होंने १०२ गांवों में २२घरेलू उद्योगों के माध्यम से काम संगठित किया। पहले-पहले ग्यारह सालों में एक लाख रुपये के मूल्य की वस्तुओं का उत्पादन हुआ। लेकिन समिति के उत्पादन को इस समय रोक देना पड़ा जब स्थानीय लोगों ने वहां बनी वस्तुओं को अपने उपभोग के लिए खरीदने में हिचकिचाहट जाहिर की। हम इस नतीजे पर पहुंचे कि घरेलू उद्योग उस समय तक नहीं पनप सकते जब तक कि सरकार उन्हें सुरक्षा प्रदान करने के लिए आगे आकर कदम न उठाए।

एक अन्य बात यह देखने में आई कि जब किसी विपत्ति के बाद लोगों को सहायता प्रदान की जाती है तो इन्हें लगता है कि यह तो उनका अधिकार है। "काम के बदले भोजन" जैसे कार्यक्रमों के अंतर्गत उन्हें दिए गए काम का ३०% भी मुश्किल से पूरा होता है। सहायता के रूप में प्राप्त सुविधाओं को वे मुफ्त में मिली चीज समझते हैं। १९७८ में बाढ़-से विनाश के बाद हमने किसानों को खेती के औजार, पम्पसेट, छिड़काव करने वाली मशीनें आदि सहायता के तौर पर दीं। परंतु उनके रख-रखाव के प्रति लापरवाही और अत्यधिक स्वार्थपूर्ण प्रयोग ने इन चीजों की हालत दयनीय बना दी। यहां तक कि इन मशीनों का कृषि के लिए उपयोग तक असंभव हो गया। ग्राम विकास में लगभग २५ वर्षों के हमारे अनुभव बहुत उत्साहवर्द्धक नहीं रहे हैं। शुरू में ही हमने महसूस किया कि पहले-पहल तो गांव के लोग बड़े जोश और शक्ति से काम में जुटते हैं परंतु जब उन्हें पैसे की तुरंत प्राप्ति होती दिखाई नहीं पड़ती तो ठंडे पड़ जाते हैं।

वैसे भी आम तौर पर सारे कार्यों का लाभ उन लोगों तक नहीं पहुंच पाता जिन्हें इसकी जरूरत है। पिछड़ी और कमजोर जातियों के लोग तो मुफ्त शिक्षा तक का लाभ नहीं उठा पाते। उनकी अपनी सुस्ती के कारण भी उन्हें आत्म-निर्भर बनाने की अनेक योजनाएं ठप्प हो जाती हैं। एक समय हम अनुसूचित जाति व जन जाति के लोगों के लिए मुर्गीपालन केन्द्र स्थापित करना चाहते थे परंतु वे लोग इस काम के लिए स्थान तक का इंतजाम नहीं कर पाए। उन्हें तो लगता है कि भगवान ने जिन्दगी दी है तो वही खाने को भी देगा। उनका भरोसा है कि परमात्मा ने ही कुछ लोगों को धनी और कुछ को निर्धन बनाया है। इन्हीं कारणों से परिवार-नियोजन जैसे कार्यक्रमों में सहकार करने में भी वे पीछे रहते हैं।

हमें लगता है कि ग्राम-पुनर्रचना के क्षेत्र में स्वतंत्रता-पूर्व का निःस्वार्थ वातावरण समाप्त हो रहा है। इस क्षेत्र में पहले जिन राजनैतिक दलों ने काफी विस्तृत योजनाएं तैयार की थीं वे वोट के चक्कर में फंसकर वातावरण को दूषित कर रहे हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि ग्राम विकास का काम तभी संभव है जबकि सबसे पहले लोगों की आंखों पर बंधी भाग्य की पट्टी को हटाया जाए। सत्तालोलुप राजनीतिज्ञों से दूर रहकर जीवन शैली में परिवर्तन हो, ग्रामवासियों में राष्ट्रप्रेम व परस्पर सहयोग की भावना जगाई जाए। □

# उत्तराखंड : प्राकृतिक-सम्पदा खतरे के कगार पर

□ शमशेर सिंह बिष्ट

उत्तराखंड अपनी प्राकृतिक सम्पदा, सौंदर्य-सुषमा व तीर्थ स्थानों के लिए विख्यात है। उसके ५१ हजार वर्गमील क्षेत्र वनाच्छादित हैं। किन्तु, यह वन-सम्पदा उसके आदर्श जीवन का आधार अभी तक नहीं बन पायी है। वहां के निवासियों को सुदूर प्रदेशों में जाकर मजूरी करके अपना पेट पालना पड़ता है।

१९७४ में मुझे उत्तराखंड के लगभग २०० ग्रामों का पैदल भ्रमण करने का अवसर प्राप्त हुआ। इस भ्रमण के दौरान मुझे निम्नलिखित बातें देखने को मिलीं :

कुल भूमि का केवल दसवाँ भाग ही कृषि योग्य है। सिंचाई की सुविधा लगभग नहीं के बराबर है। कृषि के लिए वैज्ञानिक तरीकों की यहां के लोगों को न जानकारी है और न उनका प्रयोग ही होता है। पिछले तीन सालों में तानाघाट, उत्तरकाशी और उत्तराखंड के अन्य भागों में सैंकड़ों व्यक्ति भूस्खलन और भारी वर्षा के कारण जान गंवा चुके हैं। करोड़ों रुपयों की सम्पत्ति का नाश हुआ है। एक किसान परिवार के पास केवल तीन या चार नाली भूमि होती है और वह भी ६०° से ८०° तक के ढलान पर स्थित होती है, जिस पर खेती करना जोखिम से खाली नहीं है। किन्तु, आय का कोई और साधन न होने के कारण वे ऐसी भूमि पर ही खेती करने के लिए मजबूर हैं। हमने लोगों को पथरीली भूमि को मिट्टी से ढककर खेती करते देखा है। परिणाम-स्वरूप आठ गुना श्रम करके भी यहां के किसान मैदानों की तुलना में बहुत कम पैदावार कर पाते हैं। खेतों की भूस्खलन से रक्षा करने एवं आय में वृद्धि के लिए जंगलों की बहुत अधिक उपयोगिता सिद्ध हो सकती है।

किन्तु, जो कुछ वन-सम्पदा आज विद्यमान है, उस पर भी वहां के निवासियों को कोई अधिकार प्राप्त नहीं है। इस सम्पदा पर वन-विभाग का एकछत्र स्वामित्व है। यहां के ग्रामवासी अपने गाँव की सीमा में पड़ने वाले वनों का भी कोई उपयोग नहीं कर सकते। अफसर लोग ठेकेदारों के साथ मिल कर तय कर लेते हैं कि कौन-सा वन किस ठेकेदार अथवा लखपति के अधिकार में रहना चाहिए। सहारनपुर की स्टार पेपर मिल को ट्विस्टिड लकड़ी का ठेका १९६१ से १९८१ तक २० वर्ष के लिए केवल एक रुपया प्रति क्विंटल की दर से दे दिया गया है जबकि यहाँ के निवासियों को निजी इस्ते-माल के लिए वह लकड़ी आठ रुपए प्रति क्विंटल में भी नसीब नहीं है हालाँकि ये जंगल उनके गाँव से सटे हुए हैं। यही कारण है कि यहां के लोगों में इन जंगलों के लिए ममत्व का कोई भाव नहीं रह गया है। वे उनकी रक्षा की तनिक भी चिंता नहीं करते। किन्तु ममत्व का यह अभाव ही उनके अपने लिए भूस्खलन एवं सूखे के रूप में एक भारी अभिशाप बन गया है।

लगभग चार लाख मन राल, जिसकी कीमत करोड़ों रुपए होगी, इस क्षेत्र से बाहर चला जाता है। गाँव वालों के हिस्से में टपकाने की मजूरी भर आती है। राल का बाजार भाव १२०० रुपए क्विंटल है जबकि गाँववालों को अपने श्रम के मूल्य स्वरूप प्रति क्विंटल केवल ४५ रुपये प्राप्त हो पाता है। यदि राल को कच्चे माल के रूप में बाहर न भेजा जाय तो गांववालों को अपनी आमदनी बढ़ाने का एक नया साधन प्राप्त हो सकता है। राल उत्तराखंड में बहुतायत से पाया जाने वाला कच्चा माल है।

पिछले पांच-छह वर्ष से कुछ शिक्षित-अशिक्षित नवयुवक मिलकर मानान, नैनी, चमरोली और गूटना आदि गांवों में एक राल सहकारी समिति चला रहे हैं। इस सहकारी समिति में वे श्रमिक सम्मिलित हैं जो अभी तक असंगठित थे और जिन्हें ठेकेदार पूरी मजूरी नहीं देते थे। इन युवकों ने इस शोषण का अंत करने के हेतु ग्राम विकास की योज-नायें बनायीं। इसका परिणाम है कि अब यहाँ के श्रमिकों को ४५ रुपये प्रति क्विंटल के बजाय ६० रुपए प्रति क्विंटल मजूरी मिलने लगी है। किन्तु

इसके कारण ठेकेदारों और स्थानीय नेताओं के स्वार्थ पर धक्का लगा। सभी सरकारी कर्मचारियों, राजनीतिक नेताओं व ठेकेदारों ने इस सहकारी समिति के खिलाफ संयुक्त मोर्चा बना लिया। इस संयुक्त मोर्चे से टक्कर लेने का दम इस समिति में नहीं था और वह प्रारंभिक चरण में ही चरमरा गई।

जैसे-जैसे ग्रामीण क्षेत्रों के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया आगे बढ़ रही है, सत्ता व पूंजी कुछ हाथों में केन्द्रित होते जा रहे हैं। जो लोग ब्रिटिश काल में जमींदार कहाते थे वे ही अब स्वाधीन भारत में ग्राम सभापति बन बैठे हैं। आज स्थिति यह हो गयी है कि गांव का अस्तित्व जमींदार या सभापति से अलग रह ही नहीं गया है। उसी के माध्यम से बाहर के धनी लोग व मिलमालिक गांव की प्राकृतिक व मानव सम्पदा का शोषण करते हैं। कानून उनकी मुट्ठी में बंद रहता है। इन लोगों का राजनैतिक दलों से सम्बन्ध होने के कारण उन्हें कानूनी सहायता भी सरलता से मिल जाती है। यह सभापति गांव की सब सुविधाओं का स्वामी होता है। वही स्कूल मैनेजर, पोस्ट मास्टर या दुकानदार की भूमिका निभाता है। पानी का नल भी उसके घर के पास स्थित होता है। उसके प्रभाव-दुर्ग को तोड़ना लगभग असंभव है। अतः जब ये सहकारी समितियां आरम्भ हुई तो सभापति ने उन को अपना शत्रु नम्बर एक मान लिया। जिसका परिणाम हुआ कि मंत्री से लेकर संतरी तक सब समिति के दुश्मन बन गए।

सभापति के ऊपर ब्लाक-प्रमुख होता है। अल्मोड़ा जिले में १४ ब्लॉक प्रमुख हैं। इनमें से बारह राल, लकड़ी, सड़क अथवा नहर के ठेकेदार होतेहैं। उनका विभिन्न राजनीतिक दलों से सम्बन्ध होता है। विधान सभा या लोक सभा का सदस्य बनने अथवा मंत्रिपद पाने के लिए इन लोगों की सहयोग प्राप्त करना अवश्यम्भावी है। इन लोगों के द्वारा निर्मित कोई भी नहर, ट्यूबवेल, सड़क अथवा तालाब दो-तीन वर्ष से अधिक समय तक नहीं टिकता क्योंकि ये लोग सीमेंट की जगह रेत का और रेत की जगह मिट्टी का प्रयोग करते हैं। रानीखेत के निकट नैथानी देवी जल योजना, जिस पर एक करोड़ से अधिक रुपया खर्च हुआ, इसी कारण बेकार हो गयी। इस योजना में जो जल पाइप लगाये गए थे, गांव वाले उनका इस्तेमाल कपड़े सुखाने के लिए कर रहे हैं। पिथौरागढ़, पेय-जल योजना का भी यही हाल हुआ। किन्तु इन विकास योजनाओं के नाम पर ठेकेदारों, इंजीनियरों व हाकिमों ने अपने लिए विशाल भवन खड़े कर लिए। बेचारे गरीब और असंगठित ग्रामवासी इस संगठित लूट को रोकें तो कैसे ?

कुछ वर्षों से उत्तराखण्ड में सड़कों का जाल बिछाया जा रहा है। किसी मंत्री के दिमाग में यह विचार उठ गया कि विकास माने सड़क। इन सड़कों से उत्तराखंड का जितना हित हो रहा है उससे कहीं अधिक अहित हो रहा है। इन सड़कों के कारण उत्तराखंड की स्थिति उस कमजोर बालक के समान हो गयी है जिसको ताकतवर बनाने के लोभ में किसी पहलवान का भोजन खिला दिया जाय। ये सड़कें वन सम्पदा के विनाश का कारण बन गई हैं। ठेकेदार व मिल मालिक इन सड़कों का इस्तेमाल कच्चे माल को सस्ते में पाने के लिए कर रहे हैं। पहले जिस माल को ढोने के लिए २०० खच्चरों का इस्तेमाल करना पड़ता था, अब इतना माल एक ट्रक ढो ले जाती है। परिणाम स्वरूप खच्चर वाले अब हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं और भूखों मर रहे हैं। इसका असर स्थानीय दुकानदार पर भी हुआ है। उसकी दुकान इन २०० घोड़े वालों के सहारे चलती थी न कि एक ट्रक ड्राईवर के सहारे। ग्रामीण उद्योग भी समाप्त होते जा रहे हैं क्योंकि अब उनकी जगह ट्रकों से आने वाली सस्ती और बढ़िया मिल की वस्तुओं ने ले ली है। कुल मिलाकर नतीजा यह है कि पर्वतीय जीविका की तलाश में लोग तेजी से शहरों की ओर भाग रहे हैं और यहां गांवों में केवल बूढ़े, स्त्रियां और छोटे बच्चे बाकी रह गए हैं। उत्तराखंड के शायद ही कोई गांव हो जहां कोई युवा चेहरा देखने को मिल सके। यहां की तरुणाई अब घरों से सैंकड़ों मील दूर बसे नगरों में बर्तन मांजकर या चौकीदारी करके पेट पाल रही है।

जिस प्रक्रिया का अन्तिम परिणाम यह हो उसे विकास की प्रक्रिया कहें या सर्वनाश की ? □

# जमींदारों के चंगुल से आत्म-निर्भरता की ओर

सी० फ्रांसिस
निदेशक

**वीकर कम्युनिटीज एक्शन फॉर डेवलपमेंट एंड लिबरेशन (WCADAL)**
**स्थापना : ३ जून, १९७६**

हमारा उद्देश्य है पिछड़े वर्गों, खास तौर पर हरिजनों का सामाजिक-आर्थिक उत्थान। इस संस्था का जन्म कुछ युवकों द्वारा आंध्र-प्रदेश के तेलंगाना क्षेत्र में स्थित महबूब नगर जिले में हुआ जो कि एक बहुत ही पिछड़ा हुआ क्षेत्र है। यहां स्थानीय नवयुवकों ने कुछ गांवों के विकास का काम हाथ में लिया। पहले उन्होंने उस क्षेत्र में एक सर्वेक्षण किया।

**निर्धनता की चरम सीमा पर**

इससे पता चला कि यहाँ के ज्यादातर लोगों के पास आधे एकड़ से लेकर पांच एकड़ तक भूमि है। भूमि उपजाऊ नहीं है, मानसून का कुछ भरोसा नहीं रहता, कृषि के लिए आवश्यक विनियोग इसलिए नहीं मिलता कि पानी के अभाव में भाग्य पर आधारित खेती के लिए उधार कौन दे। दुःखी होकर ये लोग अपने खेतों को चारागाह के रूप में छोड़ कर या तो कृषि-मजदूर बन जाते हैं या आस-पास के शहरों में जा कर रिक्शा खींचने जैसे काम करते हैं। होटल में प्लेटें धोने-साफ करने से कम से कम एक वक्त खाना तो नसीब होता है। जो खेतिहर-मजदूर बनते हैं वे भी स्थायी काम के अभाव में बिलखते रहते हैं और एक दिन बंधुआ-मजदूर बना लिए जाते हैं। यहाँ भूमि और मजदूरी दोनों सस्ते में उपलब्ध होने के कारण धनी लोगों और उद्योगपतियों ने भूमि का विस्तृत क्षेत्र खरीद कर अंगूर के बाग लगाए हैं और गरीब हरिजन व कमजोर लोगों की गाढ़े पसीने की कमाई आराम से खा रहे हैं।

**स्थानीय लोगों द्वारा शोषण**

स्थानीय लोगों ने भी किसानों का खूब शोषण किया है। वे उन्हें दिए गए उधार पर मनचाहा ब्याज वसूल करते हैं। अनपढ़ किसान यह ऋण कभी नहीं चुका पाता क्योंकि उसके द्वारा लौटाये गए पैसे या बदले में की गई मेहनत का कोई हिसाब नहीं रखा जाता। कभी कभी जमींदार मजदूरों की अपने खर्च पर शादी करवा देते हैं। इसमें एक घृणित स्वार्थ छिपा रहता है। एक तो उस मजदूर पर कर्ज और बढ़ जाता है दूसरे मजदूरों में एक संख्या और बढ़ जाती है।

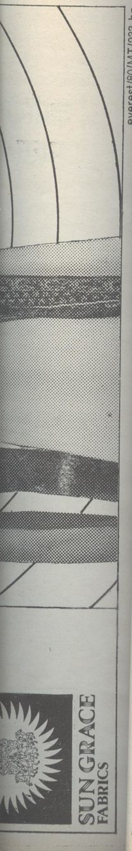




बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बावजूद निर्धनों के लिए सरकारी ऋण की व्यवस्था नहीं हो पाई है। उन्हें किसी मध्यस्थ का सहारा लेना पड़ता है जो उसमें से बड़ा हिस्सा हड़प लेता है। कई बार ग्रामीण बैंक से मिले ऋण को अनुत्पादक कामों में खर्च कर डालते हैं।

**सरकारी विकास कार्य**

विभिन्न सरकारी कार्यक्रमों का लाभ भी कमजोर वर्गों तक नहीं पहुंच पाता। गांव के शक्तिशाली लोग इस पर भी हाथ साफ कर लेते हैं। सर्वे के दौरान एक हरिजन ने हमसे कहा, "साहब! अगर आप हमारी मदद करने के लिए आए हैं तो सीधे हमसे सड़क पर आकर बात करनी होगी, कृपा करके पटेल के घर जा कर वहां हमें मत बुलाइयेगा।"

माता-पिता बच्चों को इसलिए स्कूल नहीं भेजते कि वहां उन्हें कुछ नहीं मिलता। वे तो उन्हें जमींदार की गायें चराने के लिए भेजना बेहतर समझते हैं। लड़कियां तो पराया धन मानी जाती हैं इसलिये उन्हें स्कूल में बिल्कुल ही नहीं भेजा जाता। स्कूलों के अध्यापक भी आसपास के शहरों में रहते हैं और वहां नियमित नहीं आते। गंदगी और कूड़े का गांवों में स्थायी वास देखने को मिला। ऐसी ही परिस्थितियों के कारण हमने यह स्थान चुना। परंतु देश के अन्य गांवों में भी स्थिति इससे भिन्न नहीं है।

**गाँव वालों से संपर्क**

पहला काम तो हमने यह किया कि गांव वालों के निकट जा कर उनसे संपर्क किया। परंतु वे पहले के अनुभवों से इतने त्रस्त थे कि उन्होंने हमें शोषकों का नया वर्ग समझा। उनकी नजरों में हम या तो किसी राजनैतिक दल के प्रचारक थे या मध्यस्थों का एक अन्य रूप। हमने इन धारणाओं को निकालने का विशेष प्रयास नहीं किया। धीरे धीरे हमारे साथ काम करने और हमारी गतिविधियों को देखने के बाद उन्हें हम पर विश्वास हो गया।

हमारा अगला कदम था गाँव के नेताओं व युवकों को प्रशिक्षित करना ताकि उनके माध्यम से प्रौढ़ शिक्षा व व्यावहारिक ज्ञान दिया जा सके। इस काम के लिए ज्यादातर लोग उन्हीं में से चुने गए। विशेषज्ञों की सेवाएं आवश्यकता पड़ने पर ही ली गईं।

**ग्रामीणों का सहभाग**

गांव वालों का सहभाग प्राप्त करने के उद्देश्य से सभी गांवों में 'संगमों' की स्थापना की गई। इसमें सभी गांवों के लोग रहते हैं और साप्ताहिक बैठकों में पूरे काम पर विचार कर आगे के कदमों का निर्धारण करते हैं। इसकी रिपोर्ट हमारे यहां कार्यालय में भेजी जाती है। इन्हीं संगमों के आधार पर कार्यक्रमों को हम प्रभावी रूप से लागू कर पाए। छोटे-मोटे झगड़े भी संगमों में ही सुलझाए जाते हैं। प्रत्येक संगम सदस्य एक रुपया प्रतिमास देता है। यह धन संकट के समय गांव वालों की मदद के काम आता है, जिससे वह महाजनों के चंगुलों से बचे रहते हैं। संगम से उधार लिया गया धन साधारण दर के ब्याज के साथ लौटाना होता है। इससे गांव वालों में न केवल आत्म-निर्भरता जागी है बल्कि सामूहिक-वित्त के प्रशासन का अनुभव भी उन्हें मिला है।

**महिलाओं का संगठन**

ग्रामीण महिलाओं को संगठित करना और भी कठिन काम था। परंपरागत रूप से रूढ़िवादी और शर्मीली होने के कारण उनके विकास-कार्य को बहुत धैर्य पूर्वक लिया गया। एक कठिनाई यह भी थी कि पुरुषों को लगता था कि यदि महिलाएं संगठित हो गईं तो वे उनके हाथ से निकल जाएंगी। अतः पहले हमने पुरुषों को समझाया। जब हमने संगम में महिला-संगम की बात रखी तो एक पुरुष ने खड़े हो कर कहा, 'अगर उन्हें इतना महत्त्व दे दिया गया तो वे हम से पानी लाने और बर्तन धोने को कहेंगी।" हमने उन्हें यह कह कर समझाया कि इन कामों में हाथ बंटाने में भी कोई बुराई नहीं है। एक गांव में जब पुरुष-संगम की बैठक चल रही थी तो हमारी एक महिला कार्यकर्त्री को महिलाओं से बात करने का मौका मिला। यह देख कर एक वृद्ध व्यक्ति संगम की बैठक में से उठा और जा कर

कार्यकर्ता से बात करने वाली महिलाओं को डांटने लगा। जब उस कार्यकर्ता ने समझाया कि वह तो केवल कुंए को साफ रखने और बीमारियों से बचने की बात कर रही थी तो वह व्यक्ति प्रसन्न हुआ। बाद में इसी ने महिलाओं की बैठकें बुलाने और विचार-विमर्श में आगे बढ़ कर सहायता की।

**महिलाओं को प्रोत्साहित करने के तरीके**

जब युवा लड़कियों को गीत व नृत्य सिखाये गए तो आकर्षित हो कर अन्य महिलाएं भी पढ़ने के लिए आने लगीं। अब महिलाओं को संगमों की बैठकों में आयोजना व निर्णय में सहभाग के लिए बुलाया जाता है। कई आर्थिक कार्यक्रम उन्हीं के नाम में शुरू किए गए हैं। इन्हें हस्ताक्षरों के लिए बैंक जाना पड़ता था, कभी कभी फोटो भी खिचवानी पड़ती थीं। इससे उन्हें प्रोत्साहन मिला। एक हरिजन महिला तो ऐसे ही कार्यक्रम के अंतर्गत दुधारू-पशु का चुनाव करने ४० किलोमीटर दूर तक अपने पति के साथ गई।

महिलाओं को जब यह समझ आया कि शिक्षा का अभाव उनके पिछड़ेपन व कमजोरी का कारण है तो उनके माध्यम से उनके बच्चों को शिक्षा-कार्यक्रमों से जोड़ना सरल हो गया।

**ग्राम-संगमों की बैठकें**

विभिन्न ग्राम-संगमों की एकत्रित आम-सभा की जल्दी-जल्दी बैठक बुलाई जाती है, एक वर्ष में कम से कम चार बार। यहाँ भाग लेने वाले लोग अपने-अपने गांव की रिपोर्ट देते हैं जिन पर चर्चा होती है। जो समस्याएं संगमों द्वारा नहीं सुलझतीं इन का समाधान वहां खोजा जाता है। ऐसी बैठकों से उनमें संगठन व एकता की भावना मजबूत होती है।

**सांस्कृतिक-आर्थिक विकास**

गांव वालों को नाटकों, गीतों, नृत्यों आदि सांस्कृतिक गतिविधियों के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। आर्थिक कार्यक्रमों के अंतर्गत कृषि में सामुदायिक सिंचाई कुंओं, नलकूपों, भूमि-सुधार, अच्छे बीजों का प्रयोग, खादों के इस्तेमाल इत्यादि पर ध्यान दिया जाता है।

इसके अलावा डेयरी विकास तथा, लघु व कुटीर उद्योगों के विकास कार्यों को भी हाथ में लिया गया है।

**वित्तीय स्रोत**

विदेशो, स्थानीय बैंकों, सरकारी सहायता आदि से धन जुटाया जाता है। कुल प्राप्त सहायता को एक ऐसे बैंक में जमा करवा दिया जाता है जो प्रकल्प को सहायता देना चाहता है। बैंक से ऋण 'वर्कर्स कम्युनिटीज़ एक्शन फॉर डेवलपमेंट एंड लिबरेशन' के नाम में न लेकर व्यक्तियों के नाम में लिया जाता है। इसका ब्याज संस्था देती है। जिन कामों के लिए ऋण देने में बैंक हिचकिचाते हैं—जैसे सिंचाई के कुंए, वहां हम सीधे ऋण प्रदान करते हैं। हम किसी को भी सहायता-राशि न देकर केवल ऋण के रूप में धन देते हैं जो सारा का सारा लौटाना पड़ता है। ऋण का भुगतान प्राप्त होने पर उसे ग्राम-संगम के नाम में बैंक में जमा कर दिया जाता है जिसे हमारी संस्था के मार्ग दर्शन में वित्त का इस्तेमाल करने की छूट रहती है। यह प्रत्येक ग्राम-संगम को आत्म-निर्भर बनाने का प्रयास है।

**शिक्षाप्रद आर्थिक कार्यक्रम**

हमारे सभी आर्थिक कार्यक्रम कुछ न कुछ शिक्षा जरूर देते हैं। जैसे डेयरी प्रकल्प में भाग लेने वाले लोग जानवरों का प्रबंध, दूध इकट्ठा करना व बेचना सीखते हैं। उन्हें एकाउन्ट बनाने और चारा उगाने की जानकारी भी मिलती है। कुंए की खुदाई व्यावसायिक ठेकेदार से न करवा कर उन लोगों की सहायता से की जाती है जो कुंए का इस्तेमाल सिंचाई के लिए करते हैं। चूंकि बहुत-सा काम अपना काम मान कर किया जाता है इस लिए एक कुंए की लागत सरकारी तौर पर आने वाली लागत से आधी ही आती है।

हम यह कह सकते हैं कि हमारे सारे कार्यक्रम लोगों को आत्म-निर्भर बनाने और जमींदारों व धनी किसानों पर कम से कम आधारित बनाने के उद्देश्य से आयोजित किये गए हैं ताकि वे रोजगार की तलाश में शहरों की ओर भागना छोड़ कर अपने हाथों अपने भाग्य का निर्माण कर सकें। □

स तथा, लघु व
को. भी हाथ में

रकारी सहायता
ल प्राप्त सहायता
दिया जाता है जो
है। बैंक से ऋण
र डेवलपमेंट एंड
क्तियों के नाम में
था देती है। जिन
तकिचाते हैं—जैसे
प्रदान करते हैं।
न देकर केवल
सारा का सारा
ान प्राप्त होने पर
जमा कर दिया
ार्ग दर्शन में वित्त
ी है। यह प्रत्येक
का प्रयास है।

क्रम कुछ न कुछ
प्रकल्प में भाग लेने
ध इकट्ठा करना
उन्ट बनाने और
मिलती है। कुंए
से न करवा कर
ती है जो कुंए का
। चंकि बहुत-सा
जाता है इस लिए
पर आने वाली

ारे सारे कार्यक्रम
जमींदारों व धनी
त बनाने के उद्देश्य
वे रोजगार की
ना छोड़ कर अपने
सकें। □



# अनौपचारिक शिक्षा एवं विकास-कार्य

□ कमला चौधरी

अनौपचारिक शिक्षा एवं विकास कार्यक्रम की परिभाषा करने से पूर्व मैं इस विषय पर प्रत्यक्षतः सम्बन्धित कुछ उदाहरणों के द्वारा विचार करना चाहूंगी।

**बलहेडा के ग्वाले**

बलहेडा के ८५० परिवारों से ५०प्र.श. परिवार सर्वथा भूमिहीन एवं पूर्णतया अशिक्षित हैं। जंगलों से लाख इकट्ठा करके चलने वाली उनकी रोजी भी वन सम्पदा के ह्रास के कारण समाप्त-प्राय है। स्वभावतः ही वे स्थानीय सूदखोरों के भारी कर्जों तले दबे पड़े हैं।

१९७४ में १६ आदिवासी परिवारों ने एक स्वयं-सेवी संस्था (सेवा भारती) एवं एक युवा बैंक एजेंट की सहायता से प्रति परिवार एक भैंस के हिसाब से ऋण प्राप्त करने की व्यवस्था तो कर ली किन्तु तभी उन्हें पता चला कि गांव की २०० एकड़ की चरागाह पर अपनी भैंसों को चराने की सुविधा उन्हें इसलिए नहीं मिल सकती क्योंकि वहां का यह रिवाज था कि चरागाह पर अपने पशुओं को वही चरा सकता था जिसके पास तीन या तीन से अधिक पशु हों। ग्राम-पंचायत और स्थानीय प्रशासक से सम्पर्क करने का कोई लाभ नहीं हुआ तो सोलहों परिवारों ने अपनी भैंस बेचने का निर्णय लिया किन्तु यह कदम भी वे बिना अपना ऋण चुकाये उठा नहीं सकते थे और ऋण चुकाने का अर्थ था अपना छोटा-मोटा सम्पूर्ण सर्वस्व बेचना। इन स्थिति में स्वयंसेवी संस्था एवं युवा बैंक-एजेंट ने मामला अपने हाथ में लिया एवं चरागाह-सम्बन्धी कानून का अध्ययन करके सिविल रिवेन्यू कोर्ट से एक पशुवाले परिवारों के लिये भी चरागाह का उपयोग करने का आदेश प्राप्त कर लिया।

आशा और विश्वास के इस वातावरण में उन परिवारों में प्रौढ़ शिक्षा के लिए उमंग उत्पन्न हुई ताकि अपना दूध बेचने से सम्बन्धित हिसाब किताब वे रख सकें।

आदिवासियों को दूसरा युद्ध रेलवे अधिकारियों से लड़ना पड़ा। ये अधिकारी इन दूध विक्रेताओं को अपना दूध खण्ड मुख्यालय पर स्थित सरकारी डेयरी के दूध संग्रह केन्द्र तक दूध ले जाने के लिए आवश्यक रियायतें देने को तैयार न थे। १६ ग्वाले भारी धन और समय खर्च कर क्षेत्रीय रेलवे अधीक्षक से मिलने कोटा गये किन्तु मात्र चार मिनट की बैठक में उसने उनकी सहायता करने से इंकार कर दिया। विवश होकर स्वयंसेवी संस्था ने स्थानीय युवकों के सहयोग से तीन दिन तक बलहेडा स्टेशन पर सत्याग्रह किया तब जाकर उन्हें वांछित रियायतें मिल पाई।

आज बलहेडा में ६० परिवारों के पास एक या एकाधिक भैंसें हैं और सरकार ने गांव में ही दुग्ध संग्रह केन्द्र और पशु चिकित्सालय स्थापित कर दिया है और वे निर्धन ग्रामीण विकास के पथ पर अग्रसर हो रहे हैं।

प्रश्न यह है कि बलहेडा में किस प्रकार की अनौपचारिक शिक्षा अभिप्रेत थी। सम्भवतः दूध का हिसाब-किताब रखना, भैंसों के लिये चारा एवं अन्य पोषक खाद्य-व्यवस्था आदि। किन्तु इतने मात्र की शिक्षा से क्या उनका काम चल सकता था? उनके अपने लिये विभिन्न अधिकारों के लिए लड़ाई लड़ने का ढंग सीखने की शिक्षा ही प्राथमिक आवश्यकता थी। दूसरी कोई भी शिक्षा का स्थान तो ये लड़ाइयां जीतने के बाद ही आता था।

**मन्थन**

ऐसा ही एक उदाहरण है—मन्थन--श्याम बेनगल द्वारा प्रस्तुत गुजरात मिल्क मार्केटिंग कम्पनी की एक फिल्म । पटकथा के अनुसार युवा पशु चिकित्सक के नेतृत्व में एक दल गुजरात के एक गांव में दुग्ध सहकारी समिति की स्थापना के लिये जाता है। गांव का सरपंच सहकारी समिति के निर्माण में इसी शर्त पर तैयार होता है कि उसका नियन्त्रण उसी के हाथ में रहे और चुनाव-व्यवस्था में वही उसका अध्यक्ष चुना जाए। जब एक गरीब किसान—एक हरिजन-निर्धन बहुमत के आधार पर चुनाव जीत जाता है तो सरपंच बदला लेने को उतारू हो जाता है। दूध खरीदने वाला बनिया सहकारी समिति के सदस्य बनने वालों पर अनेक आर्थिक दबाव डालने लगता है। वह दल के नेता को भी रिश्वत देने का प्रयास करता है। पशुओं की संदिग्ध अवस्थाओं में मृत्यु होने लगती है। गरीबों के लिये बनिये के पास जाकर गाय-भैंस खरीदने के लिए ऋण मांगने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं बचता । राजनीतिक सत्ता-प्राप्ति के गुर का ज्ञाता सरपंच प्रतिज्ञा करता है कि वह मुख्यालय जाकर इस नवागन्तुक दल को वापिस भिजवाने का प्रबंध कर दिखाएगा ।

फिल्म का अन्त दल-नेता की वापिसी तथा उस गाड़ी के धुएं की ओर देखते निर्वाचित नेता के सोच में डूबे चेहरे के साथ होता है ।

मन्थन के उदाहरण से भी यही सिद्ध होता है कि ग्रामीण लोग नये-नये अवसरों का उपयोग भी वर्तमान सत्ता के ढांचे में परिवर्तन और बाहरी सहायता के बिना कर नहीं सकते। साथ ही यह भी स्पष्ट होता है कि अनौपचारिक-शिक्षा का अर्थ यदि कृषि या तत्सम्बन्धी अन्य क्रिया-कलापों की शिक्षा ही है तो वे विभिन्न समस्याओं और शोषणकर्ताओं के शोषण से जूझेंगे कैसे ?

प्रो० रवि मत्थल ने एक अन्य उदाहरण भी प्रस्तुत किया है । अजमेर जिले के जावला गांव का एक साधारण किसान लघु किसान अभिकरण को ऋण-प्रदान की प्रार्थना करने के लिये अपनी भूमि का रिकार्ड प्राप्त करने एक तलाती के पास जाता है । तलाती उससे ५० रुपये की रिश्वत मांगता है। वह किसान २० अन्य किसानों को साथ लेकर तलाती के प्रति विरोध-प्रदर्शन के लिये चल तो पड़ता है परन्तु आधे रास्ते में ही उनकी हिम्मत जवाब दे बैठती है। कौन तलाती को नाराज करें ! रोज-रोज उसी से तो वास्ता पड़ने वाला है !! यही एक भाव उन्हें डरा देता है ।

इन उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि ग्रामीणों में जब तक आत्मविश्वास एवं एकता का भाव जागृत नहीं होता अनौपचारिक शिक्षा का कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता ।

**राष्ट्रीय डेयरी विकास न्यास का अनुभव**

भारत के पिछड़े जनों की छिपी क्षमताओं को प्रकाश में लाने और उन्हें आधुनिक प्रक्रिया के अंतर्गत संगठित करने की दृष्टि से राष्ट्रीय डेयरी विकास न्यास के "आप्रेशन फ्लड" कार्यक्रम को एक सफलतम कार्यक्रम माना जा सकता है।

राष्ट्रीय डेयरी विकास न्यास का प्रारम्भ तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री की आनन्द नामक स्थान की यात्रा से हुआ था। श्री शास्त्री वहां कैड़ा जिला दुग्ध उत्पादक संगठन के नवीन चारा-पूर्ति केन्द्र का उद्घाटन करने गये थे। श्री शास्त्री ने कैड़ा युनियन के अध्यक्ष के सामने शर्त रखी कि उद्घाटन कार्यक्रम से पूर्व वे एक रात समीपवर्ती ग्राम में बिना किसी सरकारी टीमटाम के बितायेंगे । गांव में रातभर रहकर शास्त्री जी ने प्रत्यक्ष देखा कि कैसे ग्वाले सहकारी समिति के पास बिक्री के लिए दूध लाते थे, उसमें कितने दूध का परीक्षण होता था, कैसे उन्हें भुगतान किया जाता था, सहकारी समिति उन्हें कौन-कौन सी सेवायें-सुविधायें उपलब्ध कराती थी । उन्होंने यह भी देखा कि कैसे भूमिहीन निर्धन नवीन अवसरों का लाभ उठाकर अपनी पूर्वकाल की सामर्थ्य-हीनता की स्थिति से ऊपर उठकर अब स्वार्थी शोषकों के हाथों में खेलने को तैयार नहीं दिखते। अगले दिन अपने उद्घाटन भाषण में श्री शास्त्री ने उस ग्राम के अनुभवों के आधार पर एक राष्ट्रीय संस्था के निर्माण पर बल दिया। लक्ष्य था—एक ऐसे समाज का निर्माण,

जो निर्धनता की समस्या से प्रभावी ढंग सेनिपटने की अपनी क्षमता का अपने आप विकास कर सके।

राष्ट्रीय डेयरी विकास न्यास द्वारा चलाये जा रहे चार महत्वपूर्ण आयोजनों पर ध्यान देना आवश्यक है :—

**१. अग्रगामी दल** : न्यास सर्वप्रथम पांच से लेकर सात व्यक्तियों का एक अग्रगामी दल एक पशु चिकित्सक के नेतृत्व में सहकारी समिति की स्थापना की दृष्टि से चुने गए गांव में भेजता है। यह दल ग्रामवासियों को सहकारिता संगठन एवं सुधरे दुग्ध-उत्पादन तथा आय की दृष्टि से आवश्यक सेवा-सुविधाओं के महत्त्व से परिचित कराता है। साथ ही यह दल ग्रामवासियों में अपने लिए एक विश्वास, आत्म-संगठन एवं परिवर्तन का स्वागत करने की भावना का भी संचार करता है। इस भावना की प्रारम्भिक अवस्था में अत्यन्त आवश्यकता रहती है।

**२. स्थानीय दल :** अग्रगामी दल स्थानीय छाया-दल के चुनाव में भी सहायता करता है। यह दल वहां के किसानों से सहकारिता सम्बन्धी आगामी भीतियों एवं आशंकाओं, पशु-चिकित्सा-संगठन तथा अन्यान्य समस्याओं पर चर्चा करता है। यह छाया दल ही अपने ग्राम में लौटकर "अग्रगामी दल" की सहायता से ग्राम-सहकारिता का संगठन एवं संचालन करता है। इस प्रकार दुग्ध में पोषक तत्वों का परीक्षण, हिसाब-प्रशिक्षण एवं विकास के पथ पर बढ़ने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। हिसाब-किताब रखना, कृत्रिम गर्भाधान आदि के पशुओं के सन्तुलित आहार, उनके पोषण एवं चिकित्सा संबंधी सुविधायें।

**३. ग्राम सहकारिता समिति** : नई ग्रामीण दुग्ध-उत्पादक सहकारिता समिति के सदस्य साधारण सभा की बैठक में प्रबन्धकारिणी के सदस्यों का चुनाव करते हैं और ये सदस्य अपने अध्यक्ष, सचिव, दुग्ध परीक्षक एवं दुग्ध संग्राहक को चुनते हैं। इस प्रकार ये सदस्य संस्था-संगठन एवं संचालन की शिक्षा प्राप्त कर लेते हैं। सहकारी समिति अपने सदस्यों को उन के दूध के बदले दिन में दो बार नकद भुगतान करती है। इस नकद भुगतान से सदस्यों में आत्म-निर्भरता एवं आत्मविश्वास के साथ अपनी स्थिति सुधारने की क्षमता के विकास की भावना संचारित होने लगती है।

**४. सहायक व्यवस्था** : साथ ही न्यास परम्परागत निहित स्वार्थों से लड़ने के लिए समर्पित युवा विशेषज्ञों एवं सुदृढ़ सरकारी तथा राजनैतिक आधारभूत ढांचे का भी अवलम्ब लिए रहता है जिसके बिना शायद इस सहकारी प्रयास को चलाना ही कठिन हो जाए (जैसा कि मंथन के मामले में स्पष्ट है)।

न्यास का पशु विकास विभाग, दुग्ध संग्रह विभाग, चारागाह तथा दुग्ध प्रक्रिया-स्थलों के निर्माण के लिए शिल्पी-दल, दुग्ध क्रय विभाग आदि इसी प्रकार के अन्य सहायक तन्त्र हैं जिनके बिना किसी एक ग्राम या ग्राम-समूह में विकास कार्यक्रमों का स्थायी क्रियान्वयन सम्भव नहीं।

**परिणाम** : हमने देखा है—

कि दुर्बल वर्ग को उत्पीड़क ढांचे एवं निहित स्वार्थों से मुक्त करने में सक्षम ढांचे को खड़ा किये बिना विकास के लक्ष्यों पर आधारित अनौपचारिक शिक्षा की प्रभावी व्यवस्था करना सम्भव नहीं।

—कि दुर्बल वर्गों के स्वयं के योगदान, आत्म-संगठन एवं निजी तथा ग्रामीण राष्ट्रीय विकास कार्यक्रमों में उनके अपने आप भाग लिए बिना विकास की वास्तविक प्रक्रिया चल नहीं सकती।

—कि निर्धनता, बेकारी विकास-कार्यक्रमों तथा अनौपचारिक शिक्षा के आयोजन को सुदृढ़ संगठनों के समर्थन की सदैव आवश्यकता रहा करती है।

—कि निर्धन संगठित होकर अपने में सौदेबाजी की पर्याप्त क्षमता विकसित कर लेता है। सफलतायें उसमें आत्म विश्वास भर देती हैं जिसके आधार पर अनौपचारिक शिक्षा का भवन खड़ा किया जा सकता है।

और अन्त में—सा विद्या या विमुक्तये।

(विद्या वही जो मनुष्य को विमुक्ति दे सके।)

□

में

हुई । इससे
पदा में से ज्यादा

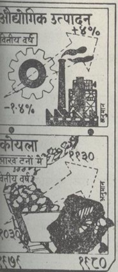


संयम

त मंगाएं
-110001
davp 80/453



# समस्याओं को हमने देखा, तह में जाकर

□ एम० जे० विलसन

विकसित देशों की विविध आर्थिक सहायताओं के बाद भी विकासशील देश अभी तक अपने निर्धनतम व्यक्ति तक उन सहायताओं का लाभ पहुंचाने और उनके जीवन स्तर को उठाने में सक्षम नहीं हो सके हैं। इसके कारण और निवारण पर सुझाव देने से पूर्व कुछ ऐसी समस्याओं और कठिनाइयों का विचार कर लेना अधिक उपयुक्त होगा जिनका सामना निर्धन ग्रामीण तथा विकास कार्यकर्ताओं को अक्सर करना पड़ता है। इतनी सरकारी योजनाओं, बैंकों आदि के द्वारा दी जा रही धनराशियों के बाद भी ग्रामीण निर्धन अभी तक वैसे का वैसा निर्धन ही क्यों बना हुआ है ? इसकी कारण मीमांसा में एक बार तो जाना ही होगा।

केरल सरकार का कृषि विभाग एक काफी बड़ा विभाग है। किन्तु हमारा अनुभव है कि इसके अधिकारी कागजों और फाइलों में तो हर समय उलझे रहते हैं परन्तु उन्हें कृषि की वास्तविक समस्यायें सुलझाने की शायद ही कभी फुर्सत मिलती हो। यहां तक कि प्रदर्शनी कार्यक्रम तथा किसानों से मौके पर (खेत में या उनके घर में) जाकर मिलने की जिनकी जिम्मेदारी है, वे भी शायद ही उस जिम्मेदारी का ईमानदारी से निर्वाह करते हों।

जब अधिकारी किसान के पास न पहुंचें तो किसानों को मजबूर होकर उनके पास पहुंचना ही पड़ता है। किन्तु वहां कार्यालय में चपरासी नाम का एक और भी बड़ा अधिकारी बैठा होता है जिसके पास सदा एक ही जवाब होता है कि अधिकारी महोदय किसी कांफ्रेंस में बैठे हैं, अभी उनसे मिला नहीं जा सकता। और अधिकारी हैं कि या तो वे हर समय कांफ्रेंस में रहते हैं या दौरे पर। किन्तु जैसे ही कोई जमींदार, कृषि-विशेषज्ञ राजनीतिक नेता पधारते हैं अधिकारी के द्वार अपने आप खुल जाते हैं और निर्धन ग्रामीणों के लिये

**चर्च आफ साउथ इन्डिया**
**कार्यक्षेत्र : साउथ केरल**
**निदेशक : एम. जे. विलसन**

निर्धारित सुविधायें सम्पन्न किसानों और राजनीतिज्ञों में बंट जाती हैं।

एक उदाहरण पर्याप्त रहेगा। प्रतिवर्ष कृषि विभाग काफी बड़ी मात्रा में सरकारी नर्सरी में विभिन्न पौधे वितरण के लिये उगाता है। किन्तु देखा गया है कि इनका लाभ निर्धन किसानों को शायद ही कभी मिल पाया हो।

यही हाल पशुपालन विभाग का है। विभिन्न स्तरों पर चलने वाले पशु चिकित्सालयों में डाक्टर और उनके सहायक भूले-भटके ही बैठे मिलते हैं। गरीब व्यक्ति जैसे ही हस्पताल में आता है 'हस्पताल में यह दवा इस समय उपलब्ध नहीं है' यह कहकर उसे निकटतम के मैडिकल स्टोर से वह दवा लाने को कह दिया जाता है। बहुत बार उस गरीब की उस दवा को खरीदने की सामर्थ्य भी नहीं होती। यही कारण है कि अधिकांश निर्धन हस्पताल जाना ही पसन्द नहीं करते।

यदि कभी पशु को हस्पताल तक लाना सम्भव न हो तो डाक्टर को गांव तक ले जाना पड़ता है। उस स्थिति में उसके लिये टैक्सी, विशेष फीस तथा उसके साथ आने वाले समस्त कर्मचारियों की सेवा-पूजा की व्यवस्था भी उसी निर्धन को करनी पड़ती है। किन्तु सम्पन्न, राजनीतिज्ञ तथा क्षेत्र के किसी प्रभावशाली व्यक्ति के मामले में डाक्टर ऐसी कोई समस्या उत्पन्न नहीं करेगा। बिना किसी चूंचपड़ के प्रत्येक सम्भव सहायता, सब प्रकार की दवाइयां उसे प्रदान कर दी जाएंगी।

**साडू योजना**

५० बिस्वा से अधिक भूमि वाले किसानों की सहायतार्थ चलने वाली योजना के अन्तर्गत बैंक साडू योजना के अधिकारियों की सिफारिश पर लम्बे समय के लिये ऋण देने को तैयार रहते हैं। बैंक ऋण के एक तिहाई भाग जितनी सहायता-राशि

भी किसान को मिल जाती है। उस सहायता-राशि को पाने के लिये किसान इस ऋण प्राप्ति के लिये उत्सुक रहते हैं। इसी प्रकार किसानों को बैल, दुधारू गाय-भैंसें, बकरियां, कृषि-उपकरण आदि खरीदने, कुएं-तालाब खोदने के लिये भी सरकारी सहायता राशि का प्रावधान रहता है। किन्तु इस राशि की प्राप्ति के लिये एस. एफ. डी. ए. द्वारा प्रदत्त पहचान कार्ड का होना आवश्यक रहता है और ये पहचान पत्र प्राप्त करने में गरीब किसान को छः छः महीने लग जाते हैं और अधिकांशतः प्रभावशाली सम्पन्न लोग ही उन्हें हड़प लेते हैं।

एक अन्य सरकारी योजना है — बछड़ा सहायता राशि। इसके लिये किसान को संकर जाति के बछड़े के प्रजनन के लिए अपनी ओर से आधे व्यय और एक बछड़े की व्यवस्था करनी होती है। गरीब किसान के पास बहुत बार तो बछड़ा ही उपलब्ध नहीं होता और यदि वह हो भी तो उस प्रक्रिया से सम्बन्धित आधा खर्च देने में वह समर्थ नहीं होता। इसके विपरीत सम्पन्न किसानों के पास बछड़े भी होते हैं और निर्धारित व्यय-राशि भी रहती है अतः इस योजना का लाभ भी वे ही उठा ले जाते हैं।

खादी कमीशन, खादी बोर्ड और उद्योग-विभाग आदि अन्य अनेक विभागों द्वारा भी निर्धन ग्रामीणों के लिये अनेक योजनायें चलाई जाती हैं परन्तु उन गरीबों को उन योजनाओं का पता तक नहीं रहता फिर उनसे लाभ उठाने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

अधिकारी वर्ग यह बखूबी समझता है कि असली निर्धन की असली सहायता किये बिना उनके कार्यक्रमों की सफलता का ढिंढोरा पीटा जा सकता है इसलिये उसे निर्धनों के वास्तविक विकास की कभी कोई चिन्ता नहीं रहती। यही कारण है कि लगभग प्रत्येक विभाग में बजट का बहुत बड़ा भाग या तो मार्च मास में ही खर्च होता है या वह धन-राशि बिना व्यय किये ही पड़ी रहती है।

**राह निकाली**

अपने नादुकनी प्रकल्प में हमने इनमें से कुछ समस्याओं के समाधान खोजे हैं। हमारे लोगों ने कृषि, पशु-पालन, बैंक आदि विभिन्न सरकारी एजेंसियों और किसानों के बीच में सम्पर्क-सूत्र का कार्य किया, किसानों के लिये अनौपचारिक शिक्षा की व्यवस्था करके उन्हें अपनी समस्यायें समझने और उन्हें सुलझाने में सक्षम बनने का अवसर दिया। ग्राम से एक महिला कार्यकत्री को चुनकर उसे स्वास्थ्य एवं स्वच्छता का प्रशिक्षण दिया और उस प्रशिक्षित महिला प्रशिक्षण के लाभ समस्त ग्राम को मिलना शुरू हो गया।

बेरोजगार अशिक्षित किशोरों को एकत्रित करके उन्हें साइकिल-मरम्मत, बढ़ईगीरी, सिलाई, कढ़ाई आदि सिखाई गई। एक अम्बर चर्खा यूनिट और सिलाई केन्द्र का संगठन किया गया। इन दोनों कार्यक्रमों से १०६ लोगों का काम मिल गया। १७५ परिवारों को बैंक से ऋण दिलाकर उन्हें अपनी डेयरी चलाने में सक्षम बनाया गया, अन्य १७० परिवारों को बछड़ा सहायता-राशि प्रदान करवाई गई। इसके साथ-साथ किसानों के लिये कृषि, पशुपालन, स्वास्थ्य एवं स्वच्छता, पोषक आहार, गन्ना पेरने आदि के कार्यक्रमों का प्रशिक्षण आयोजित करने के साथ-साथ उन्नत किस्म के बीजों और पौधों को भी उन्हें उपलब्ध कराया गया।

इस कार्यक्रम के प्रारम्भ होने से पूर्व किसी किसान को एस. एफ. डी. ए. का कार्ड नहीं मिला। अब प्रायः प्रत्येक किसान को यह कार्ड मिल गया है और बैंक भी उन्हें प्रत्येक ऋण देने को तैयार हैं। पहले इस क्षेत्र में सड़कें तथा बिजली सुविधा नहीं के बराबर थी। अब ये सुविधायें उन्हें उपलब्ध हो चुकी हैं।

इस कार्यक्रम के सफल क्रियान्वयन के लिये प्रकल्प अधिकारियों ने विभिन्न विभागों और किसानों के बीच सम्पर्क-सूत्र का कार्य किया है।

मेरा अनुभव है कि निर्धन ग्रामीण की किसी भी क्षेत्र में सहायता की जा सकती है बशर्ते कि उनके पीछे सम्पर्क-सूत्र का काम करने वाला कोई संगठन हो जो कि क्षेत्र के सम्पूर्ण विकास के लिये सरकारी अधिकारियों और जनता को एक साथ इस उद्देश्य की सिद्धि के लिये जुटा सके। □

# सरकारी ढांचे में बदलाव की जरूरत

**एशियन इंस्टीट्यूट फाँर रूरल डेवलपमेंट, बंगलौर**
**स्थापना वर्ष : १९७६**
**कार्य क्षेत्र : कर्नाटक**

□ डा० के० सी० नाइक

ए० आई० आर० डी० ने वास्तविक विकास कार्यक्रमों और समस्याओं के अध्ययन से अनेक अनुभव प्राप्त किए हैं। हमारा अनुभव है कि गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा चलाये जा रहे प्रकल्प कई बार मुसीबत ही खड़ी कर देते हैं। जैसे एक बार सरकार द्वारा नियुक्त आयोग को सहायता देने के बजाय युवकों का एक गुट जोश में आकर सरकारी अधिकारियों से भिड़ गया। सरकारी लोग भूमि जोतने वाले लोगों को भूमि-सुधारों की जानकारी देना चाहते थे। दुर्भाग्य से युवकों को भड़काने वाले लोग वह थे जो गलत तरीके से भूमि हथियाना चाहते थे। एक से दूसरा झगड़ा बढ़ गया। और परिणाम स्वरूप गंभीर समस्यायें पैदा हो गयीं। अन्ततः सरकार ने जांच-समिति बैठाई और युवकों ने मांफी मांगी तब जाकर मामला निपटा।

एक अन्य संस्था हालाँकि कई स्थानों पर दूरगामी कार्य कर रही है परंतु उसकी कुछ गतिविधियों ने सामाजिक व आर्थिक बुराइयों को पनपने में सहायता दी। जैसे एक स्थान पर हरिजनों के लिए पीने के पानी के लिए एक अलग कुंए की व्यवस्था कर दी गई। एक-दूसरे मामले में सिंचाई के लिए कुंआ प्रदान कर किसान से केले की विभिन्न किस्में उगाने के लिए कहा गया जिनमें से ज्यादातर आर्थिक दृष्टि से अच्छी नहीं थीं। तीसरे स्थान पर ट्रैक्टरों को ऐसी जगह काम में लगाया गया जहां पहले ही वर्षा की कमी थी और गहरी खेती से भूमि की उपजाऊ शक्ति और नष्ट होती थी। इन कमियों के साथ चाहे कुछ लाभ भी जुड़े हों तो भी इन्हें न्यायसंगत नहीं ठहराया जा सकता। इस प्रकार के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं जिनके गंभीर परिणाम होते हैं। इस दिशा में ए० आई० आर० डी० के अपने अनुभव भी बहुत महत्वपूर्ण हैं।

कनाडियन इंटरनेशनल डेवलपमेंट एजेन्सी, कनाडा और एग्रो-एक्शन, पश्चिम जर्मनी द्वारा उपलब्ध कराये गये वित्त से हमने एक तीन महीने का प्रशिक्षण कोर्स शुरू किया है जिसमें प्रशिक्षार्थी बंगलादेश, भारत के तीन राज्यों और दो गैर-सरकारी संस्थाओं से आए हैं। यह ग्रामीण लोगों के लिए प्रेरणा पूर्वक कार्य करने वाले आधारभूत कार्यकर्ताओं का एक प्रकार से केन्द्र बन गया है और ये कार्यकर्ता गाँव में रहकर, ग्राम समुदाय के लिए सेवाभाव से काम करने और ग्राम-विकास में सहायता करने तथा ऐसे ही उद्देश्यों की पूर्ति में जुटी अन्य संस्थाओं से सहकार करते हैं।

बैंकाक स्थित फाओ (एफ० ए० ओ०) कार्यालय की मदद से ए० आई० आर० डी० ने कर्नाटक में एक तटीय जिले के बन्तवाल तालुका को एक आदर्श विकास योजना के रूप में विकसित करने का काम हाथ में लिया है। इसी प्रकार के अन्य मॉडल खड़ा करने की भी योजना है।

सरकार और हजारों स्वयंसेवी संस्थाओं के ग्राम-विकास कार्यों में समन्वय के अभाव में परस्पर सहयोग की भारी कमी रहती है जिसे दूर करने के लिए ए० आई० आर० डी० ने काफी प्रयास किये। हमें लगता है कि हालाँकि भौतिक लाभ तो सभी संस्थाएँ बिना ज्यादा मुश्किल में पड़े प्राप्त कर सकती हैं परन्तु वास्तव में ग्राम-विकास के पूरे स्वरूप में परिवर्तन के लिए सरकारी ढांचे में बदलाव की जरूरत है जिसके लिए नीतिगत परिवर्तन करना भी आवश्यक हो सकता है। □

मंथन
सका
मत
न साल का

नरोध,
यां या
प के
कार
प्यार
davp 80/245



# भारतीय बच्चों के विदेशी अभिभावक

□

सनी वर्गीस

□

क्रिश्चियन चिल्ड्रंस फंड
स्थापना : १९३८
निदेशक : सनी वर्गीस

बच्चों की देख-भाल करने वाली अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में क्रिश्चियन चिल्ड्रन्स फंड (सी० सी० एफ०) सबसे पुरानी और सबसे बड़ी संस्थाओं में से एक है। सन् १९३८ में डा० जे. केलविट्ट क्लावर्स ने चाइना चिल्ड्रन्स फंड की स्थापना चीन में युद्ध से पीड़ित शरणार्थी बच्चों की सहायता के लिए की थी। अमेरिका में लोगों से धन एकत्रित कर उनकी मदद की गई। १९४८ में इसे क्रिश्चियन चिल्ड्रन्स फंड का नाम दे दिया गया। इस योजना के अंतर्गत एक व्यक्ति से एक बच्चे की सहायता के लिए लगातार धन लिया जाता है। १७ देशों में जरूरतमंद बच्चों के लिए ऐसे प्रायोजकों की व्यवस्था की गई है। ज्यादातर प्रायोजक अमेरिका, कनाडा, डेन्मार्क और जर्मनी के निवासी हैं। यह कार्य पूर्णतः ऐच्छिक है। आज कुल २,०६,८७७ बच्चों की मदद की जा रही है जिनमें ४०,१७७ बच्चे भारतीय हैं जो सी० सी० एफ० से संबंद्ध लगभग १९९ संस्थाओं के माध्यम से सहायता प्राप्त करते हैं। सी० सी० एफ० दुनिया भर में ३.७८ करोड़ डालर हर साल खर्च करती है जिसमें से भारत में ३.८५ करोड़ रुपया प्रति वर्ष सहायतार्थ प्रदान किया जाता है।

जो व्यक्ति बच्चे को प्रायोजित करता है उसका बच्चे से एक स्नेहपूर्ण संबंध स्थापित होता है। वह हर महीने बच्चे के नाम में कुछ पैसा भेजता है ताकि वह बालक अपनी भोजन, वस्त्र व स्वास्थ्य की मूलभूत जरूरतों को पूरा कर सके। बालक के पत्रों, विकास की रिपोर्ट आदि के माध्यम से प्रायोजक को बच्चे के बारे में जानकारी प्राप्त होती रहती है। इस सहायता का उद्देश्य बालक को अपने पांवों पर खड़ा कर समाज का सम्मानित सदस्य बनाना है। बच्चों का चयन केवल जरूरत और पारिवारिक आय के आधार पर, बिना किसी जातिभेद के किया जाता है। साधारणतया लगभग सौ बच्चों के लिए प्रति मास ८,००० रुपये की आयोजित वित्तीय सहायता जुटायी जाती है। एक बार बच्चे को प्रायोजित कर दिए जाने के बाद उसे सहायता मिलती रहती है। यदि एक व्यक्ति किसी कारण से उपलब्ध नहीं रहा तो उसे दूसरे व्यक्ति को सौंप

झट बैठो, पट बनाओ : चित्रकारी परीक्षा देते हुए बच्चे

दिया जाता है। प्राप्त सहायता से बच्चों को व्यावसायिक शिक्षा, जैसे टाइपिंग, रेडियो, टी० वी० ठीक करना, कपड़े सीना, लकड़ी का काम इत्यादि सिखाए जाते हैं ताकि १८-१९ वर्ष की आयु तक वह अपने आप कमा कर खा सके। ग्रामीण भारत में आंध्र-प्रदेश, बिहार, हरियाणा, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और पश्चिमी बंगाल में यह कार्यक्रम चल रहा है। गुजरात और राजस्थान में भी इसके चालू किए जाने की योजना है। सी० सी० एफ० की सहायता सबसे निर्धन और पिछड़े वर्गों को उपलब्ध कराई जाती है। हमें इन क्षेत्रों में स्वस्थ अनुभव मिले हैं। हालांकि यह सच है कि सदियों से उपेक्षित और दलित वर्गों में प्रेरणा जगाना कोई आसान काम नहीं है परंतु हमारा अनुभव है कि अच्छी प्रकार से प्रेरित और समर्पित कार्यकर्ताओं को पर्याप्त सफलता मिलती है।

गांधीवादी संस्था श्रम-भारती को सहायता देकर बिहार के मुंगेर जिले में 'ग्राम परिवार विकास योजना' आरंभ की गई है। लगभग सौ परिवारों में से प्रत्येक से एक बच्चे के लिए प्रायोजन की व्यवस्था की गई है। "सेंट ग्रेब्रियल्स फैमिली हेल्पर प्रोजैक्ट" के अंतर्गत जिला हजारीबाग में ३०० बच्चों को प्रायोजित किया गया है। अब वहां शिक्षा, सहकारिता, चिकित्सालय की योजनाएं सफलतापूर्वक चलती हैं। इसी जिले में पौटा के पास सी० सी० एफ० द्वारा प्रदत्त ३१,१७७ रुपये की सहायता से बांध बनाने का काम भी पूरा किया गया।

हरियाणा में फरीदाबाद के निकट अनंतपुर गांव में ३०० बच्चों को प्रायोजित किया गया है। यहाँ "बालग्राम परिवार सहायता प्रकल्प" के अंतर्गत छः बालवाड़ी चलाई जा रही हैं तथा एक प्रशिक्षण व

उत्पादन केंद्र चालू किया गया है जिसमें महिलाओं को कपड़े सीने व बुनाई का काम सिखाया जाता है। यहां महिलाओं व बड़ी लड़कियों को स्वास्थ्य संबंधी जानकारी भी दी जाती है। स्कूलों में जाने वाले बच्चों की संख्या, जो १९७८ में ६३% थी, अब १००% हो गई है।

पश्चिमी बंगाल में २४ परगना नामक स्थान पर "चाइल्ड इन नीड इंस्टीट्यूट" में बच्चों व माताओं की स्वास्थ्य रक्षा का एक बड़ा कार्यक्रम शुरू किया गया है। लगभग ५०० बच्चों के लिए प्रायोजित कार्यक्रम हाथ में लिया गया है। वनवासी सेवा आश्रम की सहायता से २५० बच्चों व परिवारों को प्रायोजित कर पहले से जारी कार्यक्रमों को बल प्रदान किया गया है।

यह तो सभी जानते हैं कि समस्या बड़ी गंभीर है। यह भी मालूम है कि पिछड़े लोगों का भयानक शोषण होता है। परंतु इन उदाहरणों व अनुभवों से हमें यह नई बात सीखने को मिलती है कि लोग सहकार और सहभाग के लिए इच्छुक हैं और उपयुक्त अवसर मिलने पर आगे आते हैं। यह देखा गया है कि प्रायोजित वित्त से लोगों को निश्चित व सुदृढ़ आधार मिलता है जिससे सेवाओं व कार्यक्रमों को आयोजित व लागू किया जा सकता है। □


## दि अवध शूगर मिल्स लिमिटेड

बिड़ला बिल्डिंग

९/१, राजेन्द्र नाथ मुखर्जी रोड, **कलकत्ता—७००००१**

**चीनी मिलें :**

**पो० हरगाँव—१६११२१**

जिला : **सीतापुर** (उत्तर-प्रदेश)

**रोजा शूगर वर्क्स**

**पो० रोजा : १४१४०६**

जिला : **शाहजहाँपुर** (उत्तर-प्रदेश)

गन्ने की विशुद्ध दानेदार एवं उत्कृष्ट कोटि के स्प्रीट के निर्माता

□

**तेल मिलें :**

**बरार आयल इण्डस्ट्रीज**

**पो० बनसदापेठ—४४४००१** अकोला (महाराष्ट्र)

बनसदा एवं **राजा ब्रांड** वनस्पति तथा चांदनी **ब्रांड साबुन** के निर्माता

□

**हरगांव आयल प्रोडक्ट्स**

पो० सीतापुर : २६१००१ (उत्तर प्रदेश)

**बदाम एवं खली तेल तथा खली के निर्माता**

# वर्ग-संघर्ष के लिए संगठन

□

**नरेन्द्र बेदी**

अध्यक्ष

□

**यंग इण्डिया प्रोजेक्ट**
**पेनुकोंडा (आन्ध्र प्रदेश)**
**स्थापना : १६७०**
**कार्यक्षेत्र : पेनुकोंडा व हिन्दुपुर तालुक**

आन्ध्र प्रदेश के पेनुकोंडा तालुक की अर्थरचना मूलतः सामन्तवादी है। लगभग ८५ प्रतिशत जनसंख्या जीविकार्जन के लिए कृषि पर निर्भर करती है। जनसंख्या वृद्धि, भूसीमा कारणों एवं निर्धनता में निरन्तर बढ़ौतरी के कारण खेतों का आकार छोटा होता जा रहा है। बहुत कम लोगों के पास आत्म-निर्भर खेती है। ६ प्रतिशत परिवारों का तालुक की लगभग ४० प्र० श० भूमि पर कब्जा है। १७ प्र० श० लोग भूमिहीन हैं। ४ प्रतिशत लोगों के पास इतनी छोटी जोत है कि उन्हें पेट भरने के लिये दूसरों के खेतों पर काम करना पड़ता है। इन दोनों वर्गों के पास कुल मिलाकर केवल २० प्र० श० भूमि है। शेष ४० प्र० श० भूमि पर मध्यम व बड़े किसानों का अधिकार है। सामन्तवादी भूमि व्यवस्था का इससे अच्छा उदाहरण और क्या हो सकता है?

पेनुकोंडा शहर में एक मूंगफली की फैक्टरी और एक घड़ी निर्माण उद्योग है। चावल मिलें पूरे तालुक में विद्यमान हैं। लगभग ४००० परिवार कृषि से मिलें स्रोतों—जैसे ग्रामोद्योग, व्यापार, सरकारी नौकरियों आदि से जीविकार्जन करते हैं। श्रमिक वर्ग को अभी भी साहूकारों आदि से ऋण लेना पड़ता है क्योंकि बैंक आदि संस्थाएं ऋण देने के पूर्व जिस प्रकार की जमानतें मांगती हैं, ये लोग उन्हें जुटा नहीं पाते। बहुधा इन लोगों को ऋण घरेलू खर्चों को पूरा करने के लिए लेना पड़ता है जिसको देने की कोई व्यवस्था इन संस्थाओं के नियमों में नहीं होती।

२० प्रतिशत से कम कृषि भूमि को सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है। अब खेती मुख्यतया वर्षा पर निर्भर करती है। यहां की मुख्य उपज मूंगफली है। कृषि के लिए अभी भी पुराने तरीके प्रचलित हैं। अतः उपज की मात्रा बहुत कम है। गरीबी भयंकरी है। पिछले दस वर्ष में मंहगाई में वृद्धि के बावजूद महिलाओं की दैनिक मजूरी ढाई रुपये व पुरुषों की साढ़े तीन रुपये मात्र है। श्रमजीवी लोगों को साल में केवल १५० दिन मजूरी मिल पाती है। साल में आधे से अधिक दिन वे बेकार रहते है।

हमारी दृष्टि में इस सब समस्याओं की जड़ उत्पादन के साधनों पर कुछ व्यक्तियों के एकाधिकार में है। अतः हमारे "यंग इण्डिया प्रोजेक्ट" का दूरगामी लक्ष्य उत्पादन के साधनों का समाजीकरण करना है, क्योंकि हमारे मन में वही इस समस्या का अन्तिम हल है। यंग इण्डिया प्रोजेक्ट ने छह मास तक इस समस्या की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का गहन अध्ययन किया। इस अध्ययन के फलस्वरूप हम इस निष्कर्ष

पर पहुंचे कि समाज के आर्थिक ढांचे में कोई भी क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने के पूर्व उतना ही क्रान्तिकारी सामाजिक व राजनीतिक परिवर्तन लाना अनिवार्य है। यह परिवर्तन लाने का अर्थ है कि सर्वहारा वर्ग वर्तमान शासक वर्ग के हाथ से तमाम सामाजिक व राजनीतिक सत्ता छीन ले। इस राजनीतिक सत्ता पर अधिकार जमाने के बाद ही वे आर्थिक ढांचे में परिवर्तन लाने व उत्पादन के साधनों का समाजीकरण करने की स्थिति में आ पायेंगे। इसलिए यद्यपि यंग इण्डिया प्रोजेक्ट का दूरगामी लक्ष्य उत्पादन के साधनों का समाजीकरण है, तात्कालिक उद्देश्य, सामाजिक व राजनीतिक सत्ता पर श्रमिक का अधिकार स्थापित करना है।

इस क्षेत्र में श्रमिक वर्ग का बहुमत होते हुए भी ६५ प्र० श० से अधिक परिवारों को अपना श्रम बड़े किसानों व जमीदारों को बेचने के लिए मजबूर होना पड़ता है। इस क्षेत्र का प्रत्येक पंचायत नेता, विधायक, ससद सदस्य या सहकारी समितियों का निर्वाचित नेता, ग़ैर श्रमिक वर्ग से आया है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि ये लोग कितने असंगठित और उदासीन हैं। इन्हें खड़ा करने के लिए भारी शैक्षणिक व संगठनात्मक प्रयत्नों की आवश्यकता है।

इस दृष्टि से "यंग इण्डिया प्रोजेक्ट" ने निम्नलिखित रणनीति अपनायी है।

१. हीन भावना को समाप्त करने व वर्ग-चेतना उत्पन्न करने के लिए साक्षरता प्रसार, सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन व स्थानीय प्रश्नों को लेकर बहस करना।

२. प्रत्येक गांव में "रैयतु कार्मिक संगम" (खेतिहर मजदूर संगठन) की स्थापना करके उन्हें संगठित करना। इन संगमों के माध्यम से निम्नलिखित कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं।

(अ) उत्पादन सहकारी समितियां
(आ) सामूहिक खेती
(इ) सामुदायिक तालाबों के पानी में भागीदारी
(ई) सामुदायिक सिंचाई
(उ) खेती का प्रशिक्षण
(ऊ) सामाजिक प्रश्नों पर जनजागरण
(ए) स्वयंसेवकों का प्रशिक्षण

यंग इण्डिया प्रोजेक्ट इस समय पेनुकोंडा तालुक के २०० ग्रामों में काम कर रहा है। कार्य की दृष्टि से पूरे तालुक को नौ उपक्षेत्रों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक उपक्षेत्र के अन्तर्गत लगभग २२ गांव व २४०० श्रमजीवी परिवार आते हैं। उपक्षेत्र नेता के मार्गदर्शन में पांच कार्यकर्ता इन २४०० परिवारों के शिक्षण और संगठन का दायित्व संभालते हैं। वे प्रत्येक गांव में "रैयतु कार्मिक संगम" का गठन करते हैं। उपक्षेत्र के स्तर पर इन संगमों का एक संघ बनाया जाता है जिसमें प्रत्येक गांव संगम का एक प्रतिनिधि होता है। यह संगठनात्मक ढांचा खड़ा हो जाने पर १९८५ के पश्चात् इस तालुके में सर्वहारा वर्ग के हाथों में सामाजिक व राजनीतिक सत्ता को पूरी तरह लाने के लिए संघर्ष प्रारम्भ किया जायेगा। □

---

ऋण-भार चढ़ा जिनके सिर पर
बढ़ता ही जाता सूद-ब्याज,
घर लाने के पहले कर से
छिन जाता है जिनका अनाज

उन टूटे दिल की साधों में
उन टूटे हुए हियाओं में,
है अपना हिन्दुस्तान कहां ?
वह बसा हमारे गांवों में।

—सोहनलाल द्विवेदी

# रोगी को दवा से अधिक प्यार चाहिए

□ लाल चुबांगलियाना

हमारा सम्बन्ध मुख्यतः ग्रामविकास में सामुदायिक स्तर पर स्वास्थ्य विकास से ही है। हमारा विश्वास है कि ग्रामीण समाज की प्रमुख स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताएं उन्हें मिलनी ही चाहिएं और इसके लिए हम इंतजार नहीं कर सकते कि कुछ लोग, संस्थाएं या सरकार उन आवश्यकताओं की हर समय पूर्ति करती रहें। कुछ समय के लिए, कुछ लोगों के लिए, कुछ कार्य करना संभव हो सकता है परन्तु सभी लोगों के लिए सभी कार्य हर समय करना संभव नहीं है। इसका रास्ता एक ही है कि हम लोगों को आत्मनिर्भर बनाने में मदद करे।

वर्षों तक लोगों को स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने के बाद हमने यह महसूस किया कि बनी बनायी लीक पर चलने वाले ग्राम-अस्पतालों द्वारा भी समाज में लोगों के स्वास्थ्य स्तर में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ। इसलिए हमने कुछ अलग प्रकार का कार्य करने का निश्चय किया। रुग्णावस्था में ही वे हमारी मदद पाने के लिए अस्पतालों में आये इसकी बजाय हमने तय किया कि हम समाज में जायेंगे और उन्हें स्वयं अपनी देखभाल करना सिखायेंगे।

जो सीखना ही नहीं चाहता उसे सिखाने की कोशिश करने से बढ़कर कठिन व निराशाजनक कार्य दूसरा हो ही नहीं सकता। एक स्वस्थ और हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति के लिये स्वास्थ्य शिक्षा का कोई महत्व नहीं है, बीमार होने पर ही वह ठीक होने के लिए स्वास्थ्य सम्बन्धी बातों को सुनने के लिए अधीर होता है। समाज का विश्वास जीतकर ही हम इस समस्या का समाधान कर सके। इसमें हमने देखा कि हमारे मुख्य आरोग्यकर अस्पताल बहुत सुविधापूर्ण सिद्ध हुए। लोगों को इन अस्पतालों में जो प्यार भरी व सफल चिकित्सा मिलती है उसी से हम समाज में विश्वास व भरोसा अर्जित करने में सफल होते हैं। इसी के परिणामस्वरूप उनमें

**एमन्युअल हॉस्पिटल एसोसिएशन**
**नई दिल्ली-११००१६**
**गतिविधियां : स्वयंसेवी स्वास्थ्य एवम् प्रशिक्षण के लिए परामर्श-दान, स्वास्थ्य सेवाएं**

स्वास्थ्य और बीमारियों की रोकथाम इत्यादि के सम्बन्ध में हमारी बातें सुनने की इच्छा उत्पन्न होती है। साथ ही हमने अपनी असफलताओं से यह भी सीखा है कि किसी अस्पताल के बारे में उत्पन्न होने वाला गलत प्रभाव, अस्पताल से सम्बन्धित किसी भी व्यक्ति को समाज की नजरों में सन्देहशील बना देता है।

हमने निश्चय किया कि समाज की स्पष्ट स्वीकृति के बिना हम कुछ नहीं करेंगे क्योंकि हमारी मान्यता है कि हम विकास प्रक्रिया का सूत्रपात करने वाले मात्र हैं। हम आरम्भिक साधनों के रूप में पेशेवर विशेषज्ञ व साज-सामान ही उपलब्ध कराते हैं। कुछ क्षेत्रों में हमें उत्साहवर्धक परिणाम भी मिले हैं, और हम खुशकिस्मत हैं कि अन्य-अनेक क्षेत्रों में हम जमे रह सके हैं। बातचीत का आरम्भ, साथ-साथ आना, दिमागों का मिलना, आपसी सहयोग और विश्वास की स्थापना—ये प्राथमिक कठिनाइयां हैं। इन्हें पार करने के बाद तो सब कुछ सरल हो जाता है।

ई० एच० ए० अपनी विभिन्न विकास प्रक्रियाओं में केन्द्र व उत्तर भारतीय गांवों में १६ अस्पताल सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों के अंतर्गत चला रहा है।

इन गांवों में किसी भी विकास प्रक्रिया को आरम्भ करने में हमें बहुत-सी व तरह-तरह की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। मुख्य समस्या मानवीय प्रकृति की अच्छी जानकारी रखने वाले कार्यकर्ताओं की कमी है। गरीबी, खराब स्वास्थ्य, रोजगार संभावनाओं की कमी और जीवन के प्रति निराशाजनक प्रवृत्ति, यह एक दूसरी कठिन समस्या है। यह स्पष्ट है कि विकास खण्डों में नहीं होता। स्थायी व अर्थपूर्ण होने के लिए विकास को एक साथ सामुदायिक जीवन के प्रत्येक भाग को स्पर्श करने वाला होना चाहिए। □

## पत्र के स्वामित्व एवं अन्य विवरणों से सम्बन्धित घोषणा

पत्रक ४ (नियम ८ देखिये)

# मंथन

| | | |
|---|---|---|
| १. प्रकाशन स्थान | : | नयी दिल्ली |
| २. प्रकाशन-अवधि | : | त्रैमासिक |
| ३. मुद्रक का नाम | : | पी० परमेश्वरन |
| क्या भारत का नागरिक है ? | : | हां, भारत का नागरिक है |
| पता | : | दीनदयाल शोध संस्थान,<br>७-ई, स्वामी रामतीर्थ नगर, नई दिल्ली-११००५५ |
| ४. प्रकाशक का नाम | : | पी० परमेश्वरन |
| क्या भारत का नागरिक है ? | : | हां, भारत का नागरिक है |
| पता | : | दीनदयाल शोध संस्थान,<br>७-ई, स्वामी रामतीर्थ नगर, नई दिल्ली-११००५५ |
| ५. संपादक का नाम | : | देवेन्द्र स्वरूप |
| क्या भारत का नागरिक है ? | : | हां, भारत का नागरिक है |
| पता | : | दीनदयाल शोध संस्थान,<br>७-ई, स्वामी रामतीर्थ नगर, नई दिल्ली-११००५५ |
| ६. उन व्यक्तियों के नाम व पते, जो समाचार पत्र के स्वामी हों, तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों। | : | दीनदयाल शोध संस्थान जो एक पंजीकृत संस्था है |

मैं, पी० परमेश्रन, एतद्द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

दि० १५-४-८१

ह०—पी० परमेश्वरन
प्रकाशक के हस्ताक्षर

णा

ली-११००५५

ली-११००५५

ल्ली-११००५५

कृत संस्था है

री एवं विश्वास के

मेश्वरन
हस्ताक्षर



# भिक्षा वृत्ति नहीं, पुरुषार्थ जगाना है

□

एम० डी० खेमका

□

**कृषि ग्राम विकास केन्द्र**
स्थापित : सन् १९७२
पंजीकृत : सन् १९७७
कार्यक्षेत्र : ततिसिलवई (रांची)
बिहार
संस्थापक : उषा मार्टिन ब्लैक लिमिटेड

हमारे कार्यक्षेत्र के अधिकांश निवासी आधुनिक सभ्यता के उजाले से बहुत दूर उपेक्षित जीवन जी रहे हैं । वे प्रकृति की दया पर पूर्णतया निर्भर हैं और आत्म-विश्वास-शून्य हैं ।

उनके विकास का अर्थ है कि उन्हें अपने परम्परागत परिवेश में रहते हुए अपने सीमित साधनों के भीतर ऊपर उठने का विश्वास प्रदान करना ।

इस लक्ष्य को सामने रखकर हमने प्रारम्भिक सर्वेक्षण के पश्चात कृषि, पशुपालन, शिक्षा, स्वास्थ्य व कुटीर उद्योगों के क्षेत्र में पंचमुखी कार्यक्रम आरंभ किया । हमने अपनी कार्यप्रणाली के दो नियामक सूत्र तय किये :

(१) उनके सामने कर्म का प्रत्यक्ष उदाहरण प्रस्तुत करना ताकि वे हमारा विश्वास कर सकें ।

(२) उनमें भिक्षावृत्ति पैदा करने के बजाय अपने पुरुषार्थ के बल पर खड़ा होने का विश्वास पैदा करना ।

खेती के नये तरीकों का प्रदर्शन करके उन्हें वर्ष में कई फसलें उगाने की प्रेरणा दी गई है। अब वे कुंओं से सिंचाई का महत्व समझने लगे है और उनके ही श्रम के द्वारा २१० सिंचाई कूपों का निर्माण किया जा चुका है । कृषि विकास केन्द्र की ओर से उन्हें कृषि की मूलभूत आवश्यक वस्तुएं लागत मूल्य पर भी दी जाती हैं। विभिन्न क्षेत्रों के किसानों के सामने प्रदर्शन के लिए हमने ५० एकड़ भूमि पर सोयाबीन की खेती लगायी है। स्कूली बच्चों की सहायता से पौधों की तीन नर्सरियों का आयोजन किया गया है।

यहाँ लगभग प्रत्येक परिवार के पास गाय या भैंस होती है किन्तु उनका स्तर बहुत ही घटिया है। उनकी नस्ल का सुधार करने के हेतु हमने आस्ट्रेलिया से ७५ सांडों का आयात किया है जिनके द्वारा स्थानीय कृषकों को मिश्र प्रजनन की सुविधा दी जाती है। पशुओं की चिकित्सा की व्यवस्था भी की गई है। पशुपालन केन्द्रों की स्थापना की गयी है, जिनमें ४६ गांवों के लगभग १५०० पशुओं की देखभाल की जाती है।

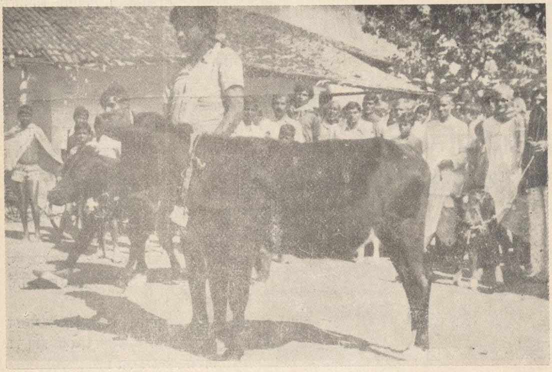

कृषि ग्राम विकास केन्द्र बेरो (रांची) में अच्छी नस्ल की भैंस

जन स्वास्थ्य की दृष्टि से हमने पहले कदम के रूप में पेयजल के लिए दो कुंओं का निर्माण कराया, जिनके साथ विद्युत चालित शुद्धीकरण यन्त्र लगे हुए हैं। इन कुंओं की उपयोगिता से उत्साहित होकर ऐसे ही आठ कुंओं का और निर्माण किया जा रहा है। किन्तु इस प्रक्रिया में हमें विद्युत चालित क्लोरीन यंत्रों की सीमाओं का भी बोध हुआ। अतः अब हमने उनके बजाय एक पोले मिट्टी के घड़े में ब्लीचिंग पाऊडर आदि को भरकर जल को शुद्ध करने का अधिक प्रभावकारी उपाय अपनाया है। इनके अतिरिक्त आस पास के गांवों में ११ और कुंओं का निर्माण किया गया है, किन्तु उनमें जल के शुद्धीकरण की व्यवस्था नहीं है।

एक चल चिकित्सालय की स्थापना की गयी है जो गांवों में स्थित हमारे स्वास्थ्य केन्द्रों पर सप्ताह में दो बार चक्कर लगाता है।

शिक्षा की दृष्टि से हमने ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों के लिए ५ प्राथमिक विद्यालयों का निर्माण किया। जब विद्यालय अच्छी प्रकार चल निकले तब उन्हें राज्य सरकार के शिक्षा विभाग को सौंप दिया गया। कृषि ग्राम विकास केन्द्र के तत्वावधान में ३० प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र भी चल रहे हैं। □

# सफलता का राज : जन सहभाग

□

वी० पी० परमेश्वर राव
सचिव

□

**भगवतुल चैरिटेबल ट्रस्ट**
**कार्यक्षेत्र : येल्लम चिली, विशाखापटनम्**
**आंध्र प्रदेश**

हमारा विश्वास है कि गांवों में रहने वाले लोगों के सहभाग और वहां के स्थानीय साधनों के सदुपयोग से ही ग्रामीणों की समस्याओं को सुलझाया जा सकता है। इसी उद्देश्य से भगवतुला चैरिटेबल ट्रस्ट ने विशाखापटनम् जिले के येल्लमचिली ब्लॉक में पचास गांवों में सर्वांगीण ग्राम विकास का काम हाथ में लिया है।

हमारा पहला उल्लेखनीय अनुभव जन-सहभाग को लेकर है। पंचाडारला पशु-विकास फार्म में अपनी प्रत्यक्ष एवं अपूर्व सफलताएं देखकर हम गोकीवाड़ा में एक प्रकल्प चालू करने के लिए प्रोत्साहित हुए। एक पहाड़ी के नीचे लगभग ८५ एकड़ जमीन का एक टुकड़ा २२५ ग्रामीणों के स्वामित्व में था। हर आदमी के पास बहुत थोड़ी-थोड़ी जमीन थी। उन्होंने गांव में एक सभा की और तय किया कि इस जमीन को भी पंचाडारला की तरह विकसित किया जाए। प्रकल्प चालू करने के लिए उन्होंने एक समिति बनाई और खुद ही सारी जिम्मेदारी ली। गांव के एक युवक को मार्गदर्शक के रूप में प्रशिक्षित किया गया। आज उसके अंतर्गत गांव के अस्सी पिछड़े परिवार न केवल आर्थिक रूप से आगे बढ़ पाए हैं बल्कि सामाजिक रूप से भी उन्नत हुए हैं।

जन-सहयोग का एक और उदाहरण तेरुवुपल्ली में प्राथमिक विद्यालय का निर्माण है। इसकी नींव पंद्रह वर्ष पूर्व रखी गई थी किन्तु उस समय निर्माण के सारे प्रयास विफल सिद्ध हुए थे। पिछले वर्ष गांव वालों की पहल पर एक कार्यक्रम तैयार किया गया। ३९,००० रुपये की अनुमानित लागत में से १९,५०० रुपये की राशि का अनुदान केन्द्रीय सरकार के ग्राम-पुनर्निर्माण मंत्रालय से मिला। बाकी पैसा गांव वालों ने खुद जुटाया। ध्यानपूर्वक देखभाल करने और आर्थिक कदम उठाने से ७८,००० रुपये के मूल्य का विद्यालय केवल पांच महीनों में बनकर तैयार हो गया जो अपने आप में एक कीर्तिमान है। यदि जनता किसी काम में सार्थक योगदान दे तो लागत में आश्चर्यजनक कमी आ सकती है इसका यह एक अनूठा उदाहरण है। इस प्रकल्प से भारतीय ग्रामीणों की अंतर्निहित बुद्धिमत्ता भी उभर कर

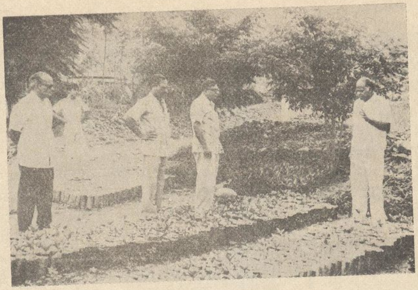

हमारे पौधा बैंक व पशु संकर प्रजनन केन्द्र का निरीक्षण करते हुए प्रो० बी० डी० नागचौधरी
प्रोजेक्ट मैनेजर वी कन्नाराव के साथ

सामने आई। हमारे औपचारिक शिक्षा कार्यक्रमों के अंतर्गत ३५ प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र चलते हैं जिनमें से ३० राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम से सम्बद्ध है और ५ गांव वाले खुद चलाते हैं। प्रत्येक बच्चा एक रुपया देता है, जगह पंचायत की दी हुई है और बाकी सामान ट्रस्ट की ओर से दिया जाता है। हमारी योजना है कि भविष्य में सभी शिक्षा-केन्द्रों को इसी स्वयंसेवी आधार पर चलाया जाए।

हमारे अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रमों में बढ़ई-गिरी, मुर्गीपालन, मक्खीपालन आदि का प्रशिक्षण शामिल है। आधुनिक डेयरी प्रबंध के तरीके इस प्रकार सिखाए जाते हैं कि थोड़े से परिश्रम से अनपढ़ भी अच्छे प्रबंधक बन सकते हैं। अब तक २,००० लोग इन कार्यक्रमों से लाभ उठा चुके हैं।

ग्रामीण ऋणग्रस्तता के विरुद्ध भी हमने कुछ काम किया है। यह हमारे लिये आश्चर्यजनक अनुभव था कि एक छोटे से गांव पर लगभग ८८,००० रुपये का ऋण था और जिस पर ३६% की औसत दर से उस गांव को हर साल ३०,००० से अधिक रुपये केवल ब्याज के रूप में चुकाना पड़ता था। इस समस्या को हल करने के लिए हमने ग्रामवासियों को कम ब्याज पर ऋण लेने के रास्तों से अवगत कराया।

अपने अनुभवों के आधार पर हम कह सकते हैं कि हमने लोगों को अपने ही पांवों पर चलना सिखाया है। हमारा प्रयास है कि उपलब्ध स्रोतों की उत्पादकता को बढ़ाया जाए, शिक्षा व स्वास्थ्य संबंधी सामाजिक महत्व की जानकारियां गांव वालों तक पहुंचाई जाएं। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि गांव वालों को खुद अपने बारे में सोचने, अपने आप योजनाओं को क्रियान्वित करने, अपने बल पर खड़ा होने और स्वयं को संगठित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। □

# सामूहिक प्रयास से आत्म निर्भरता की ओर

□

गोलन बिहारी राय
सचिव

□

**समग्र विकास परिषद**
**स्थापना : १९७९**
**कार्यक्षेत्र : बलियापाल,**
**बालासोर जिला, उड़ीसा**

हम जिस क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं वह काफी अविकसित और बाढ़-पीड़ित क्षेत्र है। फिलहाल हम मछेरों, बेसहारा महिलाओं, भिखारियों और पिछड़े-वर्गों के लिये कार्य कर रहे हैं। पहले हमने बाढ़ के विनास के कारण बर्बाद लोगों के लिये मकान बनाने का काम हाथ में लिया। अब जिन स्थानों से इन मकानों को बनाने के लिये मिट्टी लेकर हमने वहां तालाब बना दिये थे, उन स्थानों पर जलाशयों में मछलियों के अंडे-पालन केन्द्र बनाए गए हैं। यहां रहने वाले ज्यादातर लोग हरिजन हैं और नदी से मछलियों के अंड़े पकड़कर बहुत थोड़े दामों में बेचने का काम करते हैं। अब इन केन्द्रो में जो अंडे तैयार होंगे वे दो-तीन महीने बाद बेचे जाएंगे और दस गुना दाम मिलेंगे। इसके लिये लोगों ने उत्साह दिखाया है। हमारी थोड़ी सी मदद से लोग आत्म-निर्भर बन रहे हैं। उनके पास बहुत से नए विचार हैं जो कई बार हमारे तरीकों से कहीं बेहतर होते हैं। सामुदायिक आधार पर ऐसे सौ टैंक तालाब और खोदे जा चुके हैं। प्रत्येक सामुदायिक तालाब पांच से अधिक परिवारों को लाभ पहुंचाता है। इसी प्रकार मछेरों की टीमें बनाई गई हैं। अब तक ६२ परिवारों की सात टीमें बनी हैं। टीम समितियों में समस्याओं पर विचार किया जाता है। समुद्र, नदी और तालाबों में कार्य करने वाले २०० मछेरों की एक आम-सभा है। इसकी मासिक बैठक में पारस्परिक समस्याओं, संगठनात्मक मसलों व सामाजिक समस्याओं जैसे भूमि-सुधार, छूत-छात इत्यादि पर विचार विचार किया जाता है। सारे हल इसी प्रकार निकल आते हैं। अपने काम के दौरान पढ़ने के लिए कार्यकर्ता इन लोगों को पढ़ाने के लिये कक्षाएं लगाते हैं और उन्हें साप्ताहिक पाठ देते हैं। अगले हफ्ते वे पूछते हैं कि कितनी प्रगति हुई। हम उन्हें कहीं भी ऐसा नहीं लगने देते कि इन पर कुछ थोपा जा रहा है।

एक अन्य योजना के माध्यम से हम बेसहारा महिलाओं व भिखारियों के लिये भी काम कर रहे हैं। यहां धान से चावल निकालने का काम होता है। लगभग ५० बेसहारा महिलाओं के परिवारों व भिखारियों को संगठित किया जा चुका है। इन



चौधरी

% की औसत
० से अधिक
पड़ता था।
ग्रामवासियों
तों से अवगत

कह सकते हैं
पर चलना
लब्ध स्रोतों
ा व स्वास्थ्य
ां गांव वालों
न तो यह है
ोचने, अपने
पने बल पर
रने के लिए
□

लोगों की समितियां बनाकर उन्हें बचत-कार्ड जारी किये गए हैं। ये लोग संगठनात्मक गोदाम से धान ले जाते हैं और चावल की एक निश्चित मात्रा देते हैं। उन्हें औजार खरीदने में भी सहायता प्रदान की जाती है। लगभग डेढ़ सौ रुपये प्रति माह की आय में से वे बचत-कार्ड के माध्यम से स्वयं को आत्म-निर्भर बनाने के लिए कुछ हिस्सा बचाते हैं। आर्थिक, सामाजिक और संगठनात्मक समस्याओं के समाधान के लिए उनकी आम-सभा की मासिक बैठकें आयोजित की जाती हैं।

हमने तीन सामुदायिक स्टोर भी चालू किये हैं। इनमें से एक आदिवासियों के बीच है। इससे पहले आदिवासियों ने अपनी ही मदद के लिये ३,५०० रुपये का धान एकत्रित किया। इस धन का उपयोग वे लोग संकट के समय में अपने ही बीच उधार देने के लिए करते थे। यह भावना उनमें उस समय पैदा हुई जबकि धन के अभाव में एक निर्धन महिला का निधन हो गया। हमने उनके लिये और ५,००० हजार रुपये की व्यवस्था की है। अब इनके पास अपना स्टोर, स्टोर-घर, स्टोर-समिति और स्टोर-कीपर है।

हमारा अनुभव है कि जैसे-जैसे सामुदायिक भावनाओं का विकास होता है और लोग आत्म-निर्भर बनने का प्रयास करते हैं सामाजिक प्रतिक्रिया की शक्ति भी बढ़ती है। निहित स्वार्थ सामुदायिक भावना को नष्ट करने का प्रयास करते हैं। झूठे मुकदमे बनाए जाते हैं, छूतछात की समस्या बढ़ती है। परंतु सामूहिक प्रयास से इस पर काबू पाया जा सकता है। □


# साप्ताहिक हिन्दुस्तान

एक से एक बढ़कर रोचक लेख एवं पाठ्य सामग्रियों से भरपूर

(हिन्दुस्तान टाइम्स प्रकाशन)

# विध्वंस में सृजन का स्वर

□ के० सी० श्राफ*

सन् १९६८ में रामकृष्ण मिशन के निमंत्रण पर हमें सूरत के समीप मांडवी गांव में बाढ़ से उजड़े हुए लोगों के लिए बहुत कम लागत के मकान बनाने का अवसर मिला। हमारे कार्यकर्ता-दल ने बाढ़-ग्रस्त क्षेत्र में अनेक कठिनाइयों के बीच दस सप्ताह के भीतर १५ वर्ग मील में फैले हुए २१ गांवों में १३०० मकानों का निर्माण किया। एक मकान की निर्माण-लागत केवल ९५० रुपये आयी जबकि वे बाढ़ के सामने टिके रहने की क्षमता से युक्त हैं।

पुनः रामकृष्ण मिशन राजकोट के आह्वान पर १९७१ से १९७५ तक कच्छ के अकाल पीड़ित क्षेत्र में सेवा कार्य करने का अवसर मिला। स्वामी आत्मास्थानन्द के नेतृत्व में कार्य करते समय श्रीमती चन्दोबेन श्राफ व श्रीमती रंजनाबेन श्राफ ने देखा कि इस क्षेत्र की प्रत्येक महिला को आबला चित्रकारी की कला वंश-परम्परा से प्राप्त हुई है जिसका उपयोग वे केवल तीज-त्यौहार पर सजावट के लिए करती हैं। श्राफ बहिनों ने तुरन्त १०,००० रुपयों की पूंजी में एक केन्द्र की स्थापना की जहां सिल्क व कपड़े पर आबला चित्रकारी होती है और आज ५०० महिलायें इस चित्रकारी के द्वारा ३०० रुपये प्रतिमाह कमा रही हैं।

नवम्बर १९७७ में जब आन्ध्र के तटीय प्रदेश के हजारों परिवारों को भयंकर चक्रवात ने बेघरबार बना दिया था, तब पुनः रामकृष्ण मिशन ने आठ गांवों के पुनर्वास का बीड़ा उठाया और इस महायज्ञ में सम्मिलित होने का सौभाग्य हमें भी प्राप्त हुआ। यहां भी लगभग १००० मकानों का निर्माण किया गया।

किन्तु इस बार हमने अनुभव किया कि केवल मकानों का निर्माण कर देने से काम पूरा नहीं होता। उजड़े हुए लोगों के सर्वांगीण पुनर्वास की योजना हाथ में लेनी होगी। रामकृष्ण मिशन के सहयोग से आन्ध्र प्रदेश की दीवी सीमा तालुक में सर्वांगीण पुनर्वास की योजना को "ग्रामश्री" के नाम से प्रारम्भ किया गया। स्थानीय लोगों को प्रशिक्षण देने की दृष्टि से स्वतन्त्रपुरम् ग्राम में साढ़े पांच एकड़

*संयुक्त मैनेजिंग डायरेक्टर, एक्सेल इन्डस्ट्रीज, बम्बई

भूमि पर रामकृष्ण सेवा व शिक्षा संस्थान की स्थापना की गयी। ५० स्थानीय युवकों का चयन करके उन्हें 'विवेकानन्द स्कॉलर' कहा गया और प्रशिक्षण के दौरान २०० रुपये छात्रवृत्ति के रूप में दिये गये। केन्द्रीय मछली पालन प्रशिक्षण संस्थान, बम्बई की सहायता से उन्हें मछली पालन व झींगे पकड़ने का प्रशिक्षण दिया गया।

इस प्रकार एक के बाद एक करके हमें देश के विभिन्न भागों में आयी हुई प्राकृतिक विपत्तियों के समय विभिन्न समाजसेवी संस्थाओं के साथ मिलकर अनेक प्रकार के सेवा कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ। यह सेवा कार्य करते समय हमें कई समस्याओं की प्रत्यक्ष जानकारी मिली।

देश के विभिन्न भागों में बाढ़, सूखा और चक्रवात जैसी दुर्घटनायें अब आम बात हो गयी हैं। अब केवल तात्कालिक सहायता कार्यों से आगे बढ़कर प्राकृतिक विपदाओं के निराकरण का स्थायी हल खोजना होगा। उदाहरणार्थ, कच्छ में एक के बाद एक करके चार बार सूखा पड़ने से स्वाभाविक निष्कर्ष निकलता है कि इस क्षेत्र में बड़े पैमाने पर वृक्षारोपण अभियान लेने की आवश्यकता है।

आज सबसे बड़ी आवश्यकता है कि भावी गांव का एक पूर्ण व समग्र नमूना प्रस्तुत किया जाय। ऐसे ग्राम्य जीवन का आधार संसाधनों का नवीकरण व सामुदायिक जीवन रचना ही हो सकती है। आधुनिक विज्ञान व तकनालॉजी के अंधे मोह में फंसकर गांवों की परम्परागत जीवन रचना को ध्वस्त करना उचित नहीं होगा। उसी जीवन रचना को आधार बनाकर युगानुकूल संशोधन करना उचित रहेगा। इस दिशा में बहुत गहरा अध्ययन व प्रयोग करने की आवश्यकता है।

सी० सी० श्राफ रिसर्च इन्स्टीच्यूट बम्बई व कोटा केन्द्र में हम इस दृष्टि से कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित कर रहे हैं। □

**In fact**

# B. C. M. Suitings

**Made just for today's High Fashions**

**and make them better,**

Much Better

**Classical in feeling**

*and*

**Bright and Soft Colourful Composition**

## B. C. M. POLYESTER SUITINGS & SHIRTINGS

**The Birla Cotton Spg. & Wvg. Mills Ltd.**

P. O. Birla Lines, DELHI—110007

# इस्पातनगरी गांव की ओर

□ एच० एस वर्मा

**ग्राम विकास केन्द्र**
**जमशेदपुर (बिहार)**
**स्थापना वर्ष : १९७८**
**संस्थापक : टेल्को**

टाटा इंजीनियरिंग एण्ड लोकोमोटिव कम्पनी (टेल्को) ने १९७८ में ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों को अपनाकर "ग्राम विकास केन्द्र" नामक सोसायटी का गठन किया। बाद में इस उद्योग नगरी (जमशेदपुर) के अन्य संस्थान भी इस प्रयास में सहभागी हुए। "ग्रामीण विकास केन्द्र" का मुख्य उद्देश्य समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रमों के माध्यम से ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सुधार करना है। इस दृष्टि से बिहार के सिंहभूमि जिले के तीन ब्लॉक-केन्द्रों—जमशेदपुर, पोटका और चाण्डिल - को चुना गया। जमशेदपुर और पोटका ब्लॉक में पन्द्रह गांवों को अपनाया गया। इन गांवों के निवासियों की जीविका पूर्णतः कृषि पर नहीं बल्कि अन्य धंधों पर आधारित थी। किन्तु जमशेदपुर से काफी दूर स्थित डोमजुरी, खकरीपाड़ा, बड़ा गोविन्दपुर और गदरा गांव में अपर्याप्त सुविधा के ख्याल से कृषि योग्य भूमि को सिंचित करने के लिए "ग्राम विकास केन्द्र, जमशेदपुर" ने १९७९-८० में निम्न कार्यों को अपनाया—

१. डोमजुरी गांव में बहनेवाले एक नाले के ऊपर ग्रामीणों के श्रमदान से दो छोटे बांध बनाए गये। इस कार्य में केन्द्र की ओर से पन्द्रह सौ रुपये की धनराशि भी व्यय की गयी। इन दोनों बांधों से गांव में रबी और खरीफ फसल के मौसम के दौरान ८० एकड़ भूमि सिंचित की जा सकी। इन बांधों से खेतों तक पानी पहुँचाने के लिए पांच-पांच अश्वशक्ति वाले दो डीजल पम्प ग्रामीणों को उपलब्ध कराए गए।

२. गदरा गांव में ग्रामीणों के श्रमदान के माध्यम से ही ३० फीट लम्बा और १२ फीट ऊँचा मिट्टी का एक बांध बनाया गया जिससे लगभग २०० एकड़ भूमि में सिंचाई सुविधा प्रदान की जा सकी।

३. केन्द्र की ओर से बरेगोरा और बावनगोरा गांवों के बीच बहने वाले एक नाले पर भी ४० फीट लम्बा मिट्टी का एक बांध बनाया गया जिससे २५० एकड़ भूमि की सिंचाई संभव हो सकी। केन्द्र अब इसके स्थान पर कंकरीट का बांध बनाने के प्रयास में है।

चाण्डिल ब्लॉक में बेहतर कृषि सुविधायें प्रदान करने के लिए इसी प्रकार के कार्यक्रम अपनाए गए। इसके अलावे ग्रामीणों को उत्तम बीज, खाद और नयी तकनीक प्रदान करने का भी प्रयास किया गया। रबी फसल को अच्छा बनाने के लिए ग्रामीणों को लगभग पांच-पांच हजार रुपये कृषि-ऋण प्रदान करने की व्यवस्था की गयी। केन्द्र इन गांवों के निवासियों और पशुओं के लिए पेयजल की व्यवस्था करने तथा रोजगार के अवसर पैदा करने के लिए प्रयासरत है। इस कार्य में इन पांचों गांवों की ग्राम-समितियों एवं नवयुवक मंडल ने सक्रिय सहयोग दिया।

केन्द्र ने ग्राम विकास के अंतर्गत मुख्यतः तीन प्रकार के कार्यक्रम अपनाए हैं—

१. आर्थिक संसाधनों का विकास
२. जनशक्ति का भरपूर उपयोग
३. पर्यावरण सुधार

प्रथम कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत फसलों में विविधता, पौधों की सुरक्षा के लिए अच्छे तरीकों का प्रयोग, वैज्ञानिक ढंग से खेती, सभी प्रकार के सिंचाई साधनों

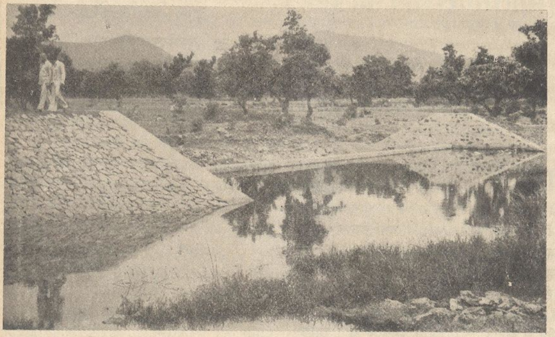

जमशेदपुर से २३ किलोमीटर दूर स्थित एक आदिवासी ग्राम चुकुलिया में टेल्को के अनुदान व ग्रामीणों के श्रमदान से निर्मित बाँध

का अधिकतम उपयोग, वैज्ञानिक एवं उन्नत कृषि यन्त्रों का प्रयोग, गांव के परम्परागत उद्योग-धंधों का विकास और उत्पादों के लिए अच्छी विपणन सुविधायें उपलब्ध कराने का प्रयास भी किया जा रहा है।

मानव विकास के क्षेत्र में बेहतर जीवन सुविधायें निर्मित करने, उपलब्ध संसाधनों के आधार पर नागरिक सुविधायें प्रदान करने, गांव की वर्तमान संस्थाओं की कार्यकुशलता बढ़ाने के लिए प्रयास, सार्वजनिक लाभ के लिए श्रमदान आयोजित करने, चौपाल पर गांवों की समस्याओं के बारे में नित्य-प्रति विचार-विमर्श करने के कार्य शामिल हैं।

ग्राम विकास केन्द्र को प्रारंभ करने में, अपनी योजनाओं को क्रियान्वित करने में दिक्कतों का सामना करना पड़ा। अधिकारियों की अन्यमनस्कता के कारण सीमेंट और अन्य प्रकार के कच्चे माल की आपूर्ति में काफी विलम्ब हुआ। गांव के मुखिया या अन्य प्रभुत्व वाले व्यक्तियों का ग्रामीणों पर अभी भी दबदबा है। और वे अक्सर स्वार्थी दृष्टिकोण अपनाते हैं। एक बड़े औद्योगिक घराने से सम्बन्ध होने के कारण इस विकास केन्द्र से वे अल्पकाल में ही आवश्यकता से अधिक अपेक्षायें और लाभ की आशायें लगा बैठे हैं। ग्रामीण-जीवन में तनाव बहुत अधिक है। परस्पर विरोधी दबाव गुट ग्राम विकास के कार्य में सामाजिक अवरोध बन जाते हैं। किन्तु कुल मिलाकर केन्द्र को अपने कार्यक्रमों में अधिकांश ग्रामीण जनता का सहयोग और समर्थन मिल रहा है। □

# नौकरशाही कैसे काम करती है

□

सुभाष मेंधापुरकर,
प्रकल्प निदेशक

□

दि सोशल वर्क एण्ड रिसर्च सेन्टर
हिमाचल प्रदेश
स्थापना : अप्रैल १९७७
कार्यक्षेत्र : हिमाचल प्रदेश

हिमाचल प्रदेश में हमने अपना कार्य तिलोनिया के मॉडल को सामने रख कर आरम्भ किया, (यह सिद्ध करने के उद्देश्य से कि यह मॉडल अन्य स्थानों पर भी लागू हो सकता है)। तिलोनियां में इस बात पर मूलतः जोर दिया गया है कि विशेषज्ञ और ग्रामीणों को आमने-सामने आने का अवसर मिले और उनके बीच की खाई को पाटा जा सके। अपने काम में हमें अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। सरकारी प्रक्रियाओं से टकराना पड़ा। उन्हें लगता था कि हमारे कारण उनकी आलसी मनोवृत्ति का पर्दाफाश हो जाएगा। इन अनुभवों को कुछ उदाहरणों से स्पष्ट किया जा सकता है।

हमने बांस की टोकरियां बनाने वाले बयालीस ग्रामीण कारीगरों का विस्तृत सर्वेक्षण किया। हमें पता चला कि स्थानीय व्यापारी उन्हें बुरी तरह लूटते हैं। एक तो उन्हें टोकरियों के बदले में कम दाम दिये जाते हैं और कारीगरों से उपभोक्ता वस्तुओं के ऊँचे दाम वसूले जाते हैं। दूसरे वे उन कारीगरों को ऊँची ब्याज की दरों पर विवाह आदि अवसरों के लिए ऋण देते थे जो पीढ़ियों तक चलता रहता था। हमने एक योजना तैयार की जिसके अंतर्गत परिवारों को आवर्ती शैली में उतना ऋण दिया जाता जो कि इनकी सप्ताह भर की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त हो। उसके साथ-साथ उन्हें उपभोग की वस्तुएं भी उपयुक्त दामों पर उपलब्ध करायी जातीं। उनके द्वारा बनाई गई टोकरियों के लिए समुचित कीमतें भी दी जाती ताकि वे बचत के माध्यम से ऋण चुका सकें। योजना व सर्वेक्षण रिपोर्ट की प्रतियां विभिन्न सरकारी विभागों को भेज दी गयीं परन्तु ज्यादातर ने उन पर कोई ध्यान नहीं दिया। एक बैंक ने काफी विचार करने के बाद सिद्धान्त रूप में इस योजना के लिए वित्तीय व्यवस्था करना स्वीकार किया। हम इसके लिए सारा विवरण इत्यादि तैयार करने में जुट गए और तभी एक दिन मुझे एस० एफ० डी० ए० के प्रकल्प अधिकारी का संदेश मिला कि वह मुझसे तुरन्त मिलना चाहते हैं। अचरज भरे मन से मैं उनसे मिलने

खड़िया चाक बनाती ग्रामीण महिला

गया। वह चाहते थे कि मैं अपनी मूल योजना खत्म कर कारीगरों को एस० एफ० डी० ए० योजना के अंतर्गत ऋण लेने के लिए तैयार करूं। मैंने साफ इन्कार कर दिया क्योंकि इससे वास्तविक उद्देश्य ही समाप्त हो जाता। अगले दिन मुझे उपायुक्त का संदेश मिला कि वह मुझसे व संबन्धित बैंक अधिकारियों के साथ विचार-विमर्श करना चाहते हैं। उस बैठक में उन्होंने हमसे उनका प्रस्ताव स्वीकार करने का आग्रह किया। अधिकारियों की इस योजना में अचानक इतनी रुचि क्यों पैदा हो गई यह हमारी समझ में नहीं आ रहा था। उपायुक्त ने बैंक अधिकारियों को जमा राशि के रूप में कुछ लाभ देने की पेशकश की और हमारे विरोध के बावजूद वे तैयार हो गये। हमारा कहना था कि केवल धन दे देने से ही कुछ नहीं होगा। इसके विपरीत ऐसा करने से कारीगरों द्वारा धन का दुरुपयोग करने की संभावनाएं बढ़ जाएंगी। उनके बहुत जिद करने पर हमने कहा कि हम केवल ऋण का वितरण करने में मदद करेंगे इसके आगे नहीं। परिणाम यह हुआ कि सारे जिले में सरकारी मशीनरी तेजी से जुट गई और तुरंत ऋण प्रदान किये जाने लगे। उल्लेखनीय है कि यह सारा नाटक लोकसभा के चुनावों के मौके पर हो रहा था। अचानक जिला सहकारिता अधिकारी को याद आया कि बड़े समय से कारीगरों की मृतप्राय दिवालिया हो गई सहकारी समिति को पुनर्जीवित करने का यह अच्छा मौका है। सरकारी अधिकारियों को कारीगरों के लिए काम करते देख काफी अचरज होता था। ऋणों की पहली किश्त खुशी-खुशी बांटी गई और फिर नाटक का पर्दा हमेशा के लिए गिरा दिया गया। छः महीनों के बाद भी ऋणों की दूसरी किश्त का वितरण नहीं हुआ था। सहकारिता अधिकारी, जिसने पूरे दो दिनों तक इस नाटक में भारी भूमिका अदा की थी, अब कारीगरों के पत्रों के उत्तर देने जैसे साधारण काम की भी परवाह नहीं

करता । कारीगर आज भी वहीं के वहीं हैं जहां हमने उन्हें छोड़ा था ।

दूसरा उदाहरण उस समय का है जब हम राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम लागू करने में जुटे थे । यह कार्यक्रम हमें सीधे केन्द्र सरकार से मिला था और भली प्रकार चल रहा था । अचानक हमें जिला शिक्षा अधिकारी से एक पत्र मिला कि प्रौ० शि० का० की विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत की जाए । लगभग एक माह बाद हमें कार्यकर्ताओं से शिकायतें मिलीं कि कुछ प्राथमिक स्कूलों के अध्यापको और वन-रक्षकों ने दिन के समय केन्द्र पर जाकर रिकार्ड की पूछताछ करनी शुरू कर दी । हमने उनसे कहा कि जब तक किसी व्यक्ति के पास अधिकार-पत्र न हो उसे जानकारी न दी जाए । जब मैं जिला शिक्षा अधिकारी के दफ्तर में गया और वहां अपने एक मित्र से बातचीत की तो उसने जो बात बताई, उसे सुनकर मैं सन्न रह गया । हमारे प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम से पूर्व ब्लॉक शिक्षा अधिकारी से ब्लॉक में यह कार्यक्रम शुरू करने के लिए कहा गया था । कुछ हाथ-पैर मारने के बाद उसने लिखा कि इस ब्लॉक में यह कार्यक्रम चला पाना संभव नहीं है । जब जिला शिक्षा अधिकारी ने हमारी रिपोर्ट देखी तो उसने ब्लॉक शिक्षा अधिकारी से पूछा कि एक निजी संस्था के लिये यह संभव कैसे हुआ । इससे क्षुब्ध होकर ब्लॉक शिक्षा अधिकारी ने स्कूली अध्यापकों की सहायता से ऐसी जानकारी इकट्ठा करने की कोशिश की जिससे हमें बदनाम किया जा सके । अतः अध्यापकों ने दिन के समय केन्द्रों पर दौरे किये और रिपोर्ट दी कि कोई भी केन्द्र नहीं चल रहा है ।

ऐसी कुछ घटनाओं के कारण सरकारी अधिकारियों से हमने कोई संबंध रखना ही छोड़ दिया । सचिवालय स्तर पर ढील-ढाल इस देश में किसी से छिपी नहीं है । एक प्रकल्प-प्रस्ताव, जो हमने फरवरी, १९७८ में कल्याण निदेशक को प्रस्तुत किया था, केन्द्र सरकार तक फरवरी १९७९ में पहुंचा ओर सरकार ने मार्च २७, १९७९ को इसके लिये राशि स्वीकृत की जो हमें कल्याण-निदेशक द्वारा ३१ मार्च, १९८० को प्रदान की गई ।

इस प्रकार के अनुभव न तो नए है ओर न ही अनूठे । मैं अपने अनुभव से कह सकता हूं कि स्वयं-सेवी संस्थाओं और सरकारी अधिकारियों के बीच स्वस्थ संबंध की बात तो हवाई-किलों जैसी ही है । □

---

**झोपड़ियों की ओर**

जिनकी भूखों की होली पर
हो मना रहे तुम दीवाली,
जिनसे तुम उज्ज्वल दीख रहे,
उनकी देहें काली - काली,
उन भोले-भाले कृषकों की
करुण कथाओं पर पिघलो ।
महलों को भूलो प्यारे !
अब झोपड़ियों की ओर चलो

—सोहनलाल द्विवेदी

# कृषि युवा क्लबों का अभिनव प्रयोग

□ डा० एस० पो० सुपे*

नागपुर कृषि महाविद्यालय प्रसार खण्ड ने ग्रामवासियों को कृषि सम्बन्धी नवीन प्रयोगों एवं अनुभवों से अवगत कराने हेतु व्यक्तिशः सम्पर्क के बजाय सामूहिक सम्पर्क पद्धति को अपनाया। इस दृष्टि से १९७३ में नागपुर के समीप सावनेरा, उमरी, खाप, खुरस गांव, मालेगांव, मानेगांव, तकली, पाटनसोंगी, विहिरगांव आदि कई गांवों में कृषि युवा क्लबों (F. Y. C.) की स्थापना की गयी। प्रत्येक क्लब की सदस्य संख्या २५ से ५० के बीच रहती है। सदस्यों का आयु वर्ग १५ से ३० वर्ष है। प्रारम्भ में इन युवा क्लबों का संचालन करने के लिये प्रत्येक गांव में ग्राम स्तर कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की गयी। पहले प्रयास किया गया कि इन क्लबों के सदस्य नागपुर आकर कृषि महाविद्यालय के वैज्ञानिकों से जानकारी प्राप्त करें। किन्तु इसमें सफलता नहीं मिली। तब ग्राम स्तर कार्यकर्ताओं ने शिवर फेरी, कृषकों के एक एकड़ खेत पर प्रत्यक्ष प्रदर्शन एवं क्लब की मीटिंगों में महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा करने का उपाय अपनाया।

१९७५ में इन क्लबों की दो वर्ष की प्रगति का अध्ययन व आकलन किया गया। इन दो वर्षों के काल खण्ड में इस क्षेत्र की महत्वपूर्ण फसलों के बारे में नये-नये प्रयोगों के प्रदर्शन आयोजित किये गये। इन प्रदर्शनों से युवा क्लबों के सदस्यों व अन्य किसानों को विभिन्न तरीकों के परिवारों का तुलनात्मक अध्ययन करने का अवसर मिला। जब फसल लगभग पक जाती है तब एक नियत तिथि पर क्लबों के सदस्य व अन्य किसान उस खेत पर एकत्र होते हैं। उन्हें खेत में घुमाकर उस प्रदर्शन में प्रयुक्त उपायों के गुण-दोषों का ज्ञान कराया जाता है। इस कार्यक्रम को शिवर फेरी कहते हैं। शिवर का अर्थ है कि गांव का कृषि क्षेत्र और फेरी का अर्थ है उस क्षेत्र का भ्रमण करना। इन शिवर फेरियों के द्वारा युवा क्लबों के सदस्यों की सफलता व असफलता को जानने का भी अवसर मिलता है।

युवा क्लबों के सदस्यों को सामूहिक गोष्ठियों, फसल प्रदर्शन दिवसों व शिवर फेरियों के माध्यम से खेती के वैज्ञानिक तरीकों की जानकारी प्रदान करने के पश्चात् उन्हें कृषकों के खर्चे पर एक एकड़ के प्रदर्शन-खेतों का निर्माण करने का कार्यक्रम दिया गया। इस प्रदर्शन खेत में फसल उगाने में कालेज के प्रसार कार्यकर्ताओं ने पूर्ण सहयोग दिया। प्रारम्भ में प्रत्येक क्लब से केवल ४ या ५ सदस्य ही इस प्रयोग के लिये आगे बढ़े। किन्तु उनकी सफलता से उत्साहित होकर अन्य सदस्यों ने भी इस प्रयोग में सम्मिलित होना स्वीकार किया। १९७५ में युवा क्लबों के सदस्य बड़ी संख्या में इस प्रयोग में सहभागी बने।

कृषि विकास की इस प्रक्रिया में सहभागी बनने के कारण कृषि युवा क्लबों के सदस्य आपसी मतभेदों से ऊपर उठकर एकता के सूत्र में गुंथ गये। राजनीतिक प्रतिस्पर्धा को भूलकर उन्होंने स्वयं प्रेरणा से वन महोत्सव, गांव की सड़कों की मरम्मत, खाद के गड्ढों की खुदाई, गांव में भजन, कीर्तन व नाटक आदि के कार्यक्रम हाथ में लिये। कुछ क्लबों ने खेल-कूद व अभिनय प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया। एक क्लब ग्रामवासियों के लिये पुस्तकालय चला रहा है। हमारा यह अनुभव है कि यदि इन क्लबों को उचित प्रेरणा व मार्गदर्शन मिलता रहे तो वे ग्राम विकास में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

*अध्यक्ष, विस्तार एवं भाषा विभाग, पंजाबराव कृषि विद्यापीठ, अकोला



लघु स्व
का सफ

के०

दि वालंटरी है
सें
स्थापना
कार्यक्षेत्र

# लघु स्वास्थ्य केन्द्रों का सफल प्रयोग

□

के० एस० संजीवी

निदेशक

□

दि वालंटरी हैल्थ सर्विसेज मेडिकल सेंटर, मद्रास

स्थापना : १९६१

कार्यक्षेत्र : मद्रास शहर

हमने चिकित्सा क्षेत्र में सहायता, शिक्षा और शोध के उद्देश्य से कई प्रकल्प हाथ में लिये हैं। ग्राम-विकास के क्षेत्र में हमने स्वास्थ्य की देखभाल का व्यापक कार्यक्रम हाथ में लिया है जिसमें भौगोलिक या आर्थिक पृष्ठभूमि या शिक्षा की दृष्टि से जन-समूह चुनने की सीमाएं लागू नहीं की गई हैं।

अनौपचारिक शिक्षा के लिए हम भारत सरकार के प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के अंतर्गत कक्षाएं चला रहे हैं। हमने देखा कि ऐसी जानकारी पाने के लिए साधारणतया गांव में एक व्यक्ति को ८५० से अधिक शब्दों की जरूरत नहीं पड़ती। इनमें भी लगभग ४०० शब्द बड़े आसान हैं। लगभग ४५० शब्द ऐसे हैं जिनके लिए समझाने की आवश्यकता पड़ती है।

हमारा अनुभव है कि शिक्षा पाने के लिए १४ से ३० वर्ष तक की आयु की लड़कियां व महिलायें ही ज्यादा आती हैं। बड़ी उम्र की महिलाएं कृषि-कार्यों में ज्यादा व्यस्त रहती हैं। परन्तु वे अनपढ़ होते हुए भी बुद्धिमान हैं। एक गांव में पांच साल की उम्र में सब लड़के व लड़कियों को स्कूल में भरती कर दिया जाता है। लड़के अपनी शिक्षा जारी रखते हैं जबकि ज्यादातर लड़कियों को सातवीं-आठवीं कक्षा में पहुंचने से पहले ही स्कूल से उठा लिया जाता है। आमतौर पर इसका कारण यह है कि जब घर में नया बच्चा पैदा होता है तो लड़की को उसकी देखभाल का काम संभालना पड़ता है। पढ़ने की तीव्र इच्छा होते हुए भी स्कूल के बंधे हुए घंटों और अनुशासन में रह पाना उनके लिए संभव नहीं रहता। उनमें दस्तकारी सीखने और जेब खर्च के लिए कुछ कमाने की उत्कंठा रहती है। स्वास्थ्य की देखभाल के लिए हमने लघु स्वास्थ्य केन्द्रों की शैली शुरू की है। ऐसे एक केन्द्र से १,००० परिवारों या ५,००० की जनसंख्या के लिए व्यापक, सामुदायिक व सतत कार्यक्रमों के माध्यम से स्वास्थ्य की देखभाल का काम किया जाता है। यहां परिवार के प्रत्येक सदस्य की शारीरिक जाँच की जाती है तथा उसकी स्वास्थ्य सम्बन्धो बातों का रिकार्ड रखा जाता है। प्रयोगशाला में जांच-पड़ताल करने के बाद उसे आवश्यक

होने पर चिकित्सा प्रदान की जाती है गंभीर मामलों को स्थानीय अस्पतालों को सौंप दिया जाता है। गर्भवती महिलाओं के लिए प्रसव सेवाएं व आवश्यक देखभाल की सेवायें भी दी जाती हैं। प्रत्येक गर्भवती का गर्भावस्था के दौरान महीने में एक बार परीक्षण किया जाता है और आवश्यक दवाएं दी जाती हैं। बाल-कल्याण सेवाओं के अन्तर्गत बच्चे के विकास का रिकॉर्ड रखा जाता है। चेचक, पोलियो आदि बीमारियों से बचाव के लिए सुरक्षात्मक इंजेक्शन लगाये जाते हैं। विटामिन की कमी, प्रोटीन की कमी आदि से रक्षा के लिए भी आवश्यक प्रबंध किए जाते हैं।

परिवार नियोजन की दृष्टि से सभी उपयुक्त दम्पतियों को सलाह दी जाती है। आवश्यकता होने पर उन्हें बच्चों के जन्म में रोकथाम के साधन भी प्रदान किये जाते हैं। ऑप्रेशन का प्रबन्ध स्थानीय कल्याण केन्द्र की मदद से किया जाता है।

सप्ताह में तीन दिन प्रातःकाल तीन घंटे के लिए प्रशिक्षित चिकित्सक की सेवाएं रोगियों के लिए इन्हीं लघु चिकित्सा केन्द्रों में उपलब्ध रहती हैं। यह प्रकल्प लोगों को आकर्षित करने के लिए है ताकि अन्य प्रकार की बीमारियों की ज्यादा प्रभावी तरीके से रोकथाम की जा सके। लोगों का विश्वास जम जाने के बाद सप्ताह में तीन के बजाय दो ही दिन केन्द्र में सेवायें दी जाती हैं और बचे हुए एक दिन में डॉक्टर क्षेत्रों में दौरा करते हैं। स्वास्थ्य की देखभाल के इस कार्यक्रम के अंतर्गत छोटी-मोटी बीमारियों का इलाज, एवं टी० बी० का प्राथमिक उपचार होता है। ब्लड-प्रेशर और मूत्र के निरीक्षण से खून की बीमारियों व मधुमेह की जांच भी ३५ वर्ष से अधिक आयु के लोगों के लिए की जाती है। बच्चों और गर्भवती महिलाओं को होने वाली बीमारियों का उपचार किया जाता है। आवश्यकता होने पर विशेषज्ञ द्वारा जांच या अस्पताल में प्रवेश के लिए भी कहा जाता है। यह स्वास्थ्य कार्यक्रम समय-समय पर किये गए दौरों, शिविरों व अन्य कार्यक्रमों के माध्यम से लगातार चलते हैं। न केवल परिवारों के रोगों और उनके बचाव की जानकारी अपने आप हो जाती है बल्कि उन क्षेत्रों में काम करने वाले डॉक्टर भी परिचित हो जाते है। इस प्रकार का प्रकल्प चलाने के लिए लोगों का सहयोग तो आवश्यक है ही। लोगों को यह लगना चाहिए कि यह उनकी अपनी ही योजना है न कि शहर में रहने वाले धनी लोगों की सहानुभूति की उपज। इसका सबसे अच्छा तरीका तो उन्हें योजना का सदस्य बना लेना है। प्रत्येक परिवार से बीमे के आधार पर उनके स्वास्थ्य की देखभाल के लिए एक राशि ले ली जाती है। पचास पैसे या एक रुपये के लगभग राशि के बदले में प्रत्येक परिवार को एक कार्ड जारी किया जाता है। इसके अतिरिक्त सामुदायिक सहभाग के लिए भी समाज से स्थान, फर्नीचर आदि की निःशुल्क व्यवस्था करने को कहा जाता है। स्थानीय नेताओं, पंचायत के सदस्यों, अधिकारियों व अन्य लोगों की समिति बनाई जाती है। समय-समय पर सभाओं, फिल्म-शो, प्रदर्शनी इत्यादि से भी सामूहिक सहभाग की भावना भरी जाती है। गांव के ुने हुए लोगों को प्राथमिक उपचार का प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

इन कामों के लिए एक अर्धकालिक चिकित्सा अधिकारी, एक-एक पूर्ण कालिक पुरुष व महिला सहायक-चिकित्सक, तीन सामाजिक कार्यकर्ता या प्राथमिक उपचार-सहायकों की व्यवस्था की जाती है। प्रकल्प में सभी कार्यकर्ताओं के कार्यों का निर्धारण किया गया है।

एक लघु स्वास्थ्य केन्द्र का व्यय लगभग २९,००० रुपये आयेगा जिसे केन्द्र सरकार, राज्य सरकार व समाज में क्रमशः ९,००० रुपये, ९,००० रुपये व ६,००० रुपये में बाँटा जाना चाहिए। तमिलनाडु राज्य में जहां विभिन्न जिलों में १६० ऐसे केन्द्र चल रहे हैं, सरकार ने इस शैली को स्वीकार किया है। अंततः हम सारे तमिलनाडु राज्य में ऐसे लघु स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना करना चाहते हैं। □

# हमारे कुछ सफल प्रयोग

एस० आर० सबनीस
मैनेजिंग ट्रस्टी

रूरल एग्रीकल्चरल इन्स्टीट्यूट
नारायण गांव (जि० पुणे)
स्थापना वर्ष : १९७३

अपने समाज के निर्धन जनों के प्रति प्रत्येक व्यक्ति के सामाजिक दायित्व की बातें हम लोग बढ़-चढ़ कर करते रहते हैं। हमारे धर्मार्थ न्यास के आठ ट्रस्टियों ने यह विचार किया कि छोटे किसानों के लिये कुछ कार्य करके इस विचार को व्यवहार का रूप दिया जाए।

कृषि-उत्पादों में वृद्धि की दृष्टि से जल सर्वाधिक महत्व की वस्तु है। हमने राज्य के सिंचाई विभाग नाला बंधों—गुट्ठियां लगवाने के लिए सम्पर्क किया। अनुमानतः २५००० रु० के व्यय से लगभग डेढ़ मील व्यास के क्षेत्र में २५ स्थानों पर गुट्ठियां लगाई गईं। परिणाम आश्चर्यजनक था। पानी की एक बूंद भी नदी में नहीं गई। इसे भू-सिंचाई के काम में लाया गया और लगभग ४० कुंओं में पहले से अधिक पानी की मात्रा हो गई।

किन्तु एक चीज मुझे बहुत अखरी कि इस व्यवस्था से लाभ उठाकर हजारों रुपये कमाने वाले किसानों में से कोई एक भी कभी हमारे ट्रस्ट में यह कहने नहीं आया कि आप के कार्य से हम लाभान्वित हुए हैं। मैं इस बात का उल्लेख विशेष रूप से इसलिये कर रहा हूं यह प्रवृति विकास-प्रकल्पों की प्रगति की दृष्टि से सबसे बड़ी कमी कही जा सकती हैं।

हमारा अगला कदम था—छोटे किसानों के घर में दूध की मात्रा बढ़ाना। महाराष्ट्र में लगभग ८० प्र० श० किसानों के दैनिक भोजन में दूध की मात्रा बहुत कम होती है। स्वभावतः छोटे बच्चों को आवश्यक दूध भी नहीं मिल पाता। अतः दूध की मात्रा बढ़ाने के लिए पशुओं में संकर प्रजनन का कार्य पर्याप्त मात्रा में कराया गया। किन्तु इसमें होने वाला खर्चा औसत किसान के बस से बाहर की बात था अतः हमने भारतीय बकरी के स्तर को ही सुधारने की बात सोची। औसतन हमारे क्षेत्र के एक किसान के पास एक बकरी होती है किन्तु उनके दूध की मात्रा ३०० दिनों में १५० लिटर दूध की ही होती है। मैंने इंगलैंड में १०-१० लिटर दूध देने वाली बकरियां भी देखी हैं। अतः हमने इंगलैण्ड, आस्ट्रेलिया और इजराइल से बकरियां मंगाई। गत

पांच वर्षों में ५० प्र० शत संकर जाति की एक पीढ़ी की बकरियां ३०० दिनों में ३०० लिटर से अधिक दूध दे रही हैं। लगभग ६०० किसानों ने इस सुविधा का लाभ उठाया है। यदि हम धन राशि जुटा सके तो हम २० मील के क्षेत्र के ३००० चरवाहों को इस योजना से लाभान्वित करने का प्रयत्न करेंगे।

इसके बाद हमने बीजों और खाद को "उधार" देकर खेती की कटाई के बाद उस "उधार" की वसूली का कार्य शुरू किया। किन्तु उधार लौटाने में किसानों की लापरवाही की वृत्ति के कारण हम इस योजना को बन्द करने को विवश हो गए।

मैं समझता हूं कि ६ प्र० श० ब्याज पर हम ग्रहण प्राप्त करके उसके बीज, खाद आदि खरीदकर १२ प्र० प्र० ब्याज पर उन्हें किसानों को देकर ६ प्र० श० के लाभ की धनराशि से एक स्थायी कार्यकर्ता को नियुक्त कर सकते हैं जो एक पक्ष में कम से कम एक बार प्रत्येक किसान के घर में जाकर उनसे वास्तविक सम्पर्क स्थापित करके उन्हें विविध नवीन विचार प्रदान कर सकता है। किन्तु किसानों के "ऋण न लौटाने" की प्रवृति इस दिशा में बहुत बड़ी रुकावट बनी हुई है।

हमारा चौथा कार्य था—लगभग २० गोबर संयंत्रों का निर्माण। प्रारम्भिक चरण में इस पर होने वाला व्यय अत्यधिक था अतः छोटे किसान इससे लाभान्वित नहीं हो सके। अतः अब हमने "जनता गोबर गैस प्लांट" प्रारम्भ किए हैं जिनमें लोहे के ढांचे की आवश्यकता बिलकुल नहीं पड़ती और इससे व्यय में ३५ से ४० प्र० श० की कमी हो गई है। अतः अब हम इन संयंत्रों को अधिक मात्रा में लगाने के प्रति आशावान हैं।

सस्ते चारे की व्यवस्था करना हमारा अगली योजना का अंग है। हम ६० एकड़ शुष्क भूमि में ३०,००० चारा-पेड़ लगाने जा रहे हैं। प्रारम्भिक अवस्था में ५ वर्ष तक उनकी सिंचाई आदि की चिन्ता करनी होगी और उसके बाद वे वर्षा जल के सहारे ही जीवित रह लेंगे। सम्भवतः ४०० पेड़ों वाली एक एकड़ी भूमि ६०० रु० मूल्य का चारा बिना सिंचाई जल के ही उत्पन्न हो जाएगा। □

---

# ग्रामीण युवा पढ़ाई क्यों छोड़ देते हैं?

**इन्डियन इंस्टीच्यूट आफ रूरल वर्कर्स**
**औरंगाबाद (महाराष्ट्र)**

□ **विजेन्द्र काबरा**
उपाध्यक्ष

महाराष्ट्र को यदि भारत के सर्वाधिक विकसित औद्योगिक राज्यों की श्रेणी में रखा जा सकता है तो उसके एक अंग मराठवाड़ा को अत्यन्त पिछड़े हुए प्रदेशों की पंक्ति में रखना होगा। घोर दारिद्र्य एवं प्राथमिक सुविधाओं के अभाव के कारण यहां शिक्षा की भी भारी कमी है। ८वीं, ९वीं व १० वीं कक्षाओं में पहुंच कर पढ़ाई छोड़ देने वाले छात्रों का प्रतिशत मराठवाड़ा में सर्वाधिक है। विदर्भ में यह प्रतिशत क्रमशः १७, २५ व ३६ हैं, पश्चिमी महाराष्ट्र में क्रमशः १४, २५ व ४१ है तो मराठवाड़ा में यह प्रतिशत क्रमशः २४, ३५ व ४५ पहुंच जाता है।

इन्डियन इंस्टीट्यूट आफ रूरल वर्कर्स ऐसे ही निर्धन, अशिक्षित अथवा अर्धशिक्षित एवं किसी भी प्रकार की शिल्पकला से अपरिचित युवकों के लिए व्यावसायिक शिक्षा का आयोजन करती है। इस व्यावसायिक प्रशिक्षण के अंतर्गत ऐसे युयकों को डेयरी, मुर्गीपालन, तेल पेरना, बढ़ईगिरी, राजगिरी, ईंट निर्माण, दर्जीगिरी, छीपीगिरी आदि दस्तकारियां सिखायी जाती हैं।

कुछ समय पूर्व इन्स्टीट्यूट ने मराठवाड़ा के वैजापुर तालुक में ग्रामीण युवकों की एक कार्य-

गोष्ठी का आयोजन करके मराठवाड़ा क्षेत्र के माध्यमिक स्कूलों में पढ़ाई छोड़ देने वाले छात्रों की संख्या इतनी अधिक होने के कारणों का पता लगाने का प्रयास किया। इस गोष्ठी का दूसरा उद्देश्य यह पता लगाना था कि इन युवकों की रुचियां व आकांक्षायें क्या हैं और उनकी शिक्षा प्राप्ति के मार्ग में बाधायें क्या है। गोष्ठी में भाग लेने वाले ग्रामीण युवकों को छोटे-छोटे गुटों में विभाजित कर दिया गया था ताकि बड़े उन्मुक्त व सहज वातावरण में चर्चा हो सके। इन युवकों में से अधिकांश लोग पांचवी कक्षा पास थे और १६ से २५ वर्ष के आयु वर्ग में थे। वे भूमिहीन परिवारों में जन्मे थे और ६० प्र० श० का विवाह हो चुका था। एक आश्चर्यजनक पक्ष यह था कि इस कार्यगोष्ठी में महिलाओं का सहभाग तनिक भी नहीं था, संभवतः मातापिताओं ने उन्हें नहीं आने दिया होगा।

इस गोष्ठी में से यह बात उभरकर आयी कि अधिकांश ग्रामीण युवकों के पढ़ाई छोड़ देने का कारण उनकी कठिन आर्थिक स्थिति नहीं थी अपितु जीविकार्जन की दृष्टि से शिक्षा की निरुपयोगिता का भाव उनके तथा उनके अभिभावकों के मनों में रहना था। कुछ लोग विद्यालय के कठोर अनुशासन से डरकर पढ़ाई छोड़ भागे तो कुछ फेल हो जाने के कारण निरुत्साहित हो गए। अनेक अभिभावक अपने बच्चों को विद्यालय में भेजने के बजाय उनसे मजूरी करवाना ज्यादा पसन्द करते हैं। शिक्षा के प्रति अरुचि पैदा होने का एक कारण अध्यापक वर्ग के प्रति अश्रद्धा पैदा होना भी है और इस अश्रद्धा के जन्म देने में युग-प्रभाव के साथ-साथ अध्यापकों का अपना चरित्र व व्यवहार भी है।

गोष्ठी में भाग लेने वाले लगभग २५ प्रतिशत युवकों को जूते बनाने अथवा रस्सी बंटने जैसे खानदानी पेशों का ज्ञान था। भूमिहीन परिवारों से सम्बन्धित होने के कारण कृषि के बारे में भी उनका ज्ञान शून्य के बराबर था। आश्चर्य की बात यह थी कि ये लोग ग्रामीण परिवेश में कार्य करने को तैयार नहीं थे।

इन ग्रामीण युवकों की मानसिकता, एवं समस्याओं और उनके हल के बीच जो दूरी विद्यमान है उसे पाटने की दिशा में निम्नलिखित पग उठाये जा सकते हैं:

(अ) शिक्षा और रोजगार संबंधी प्रशिक्षण को परस्पर गूंथ करके ही उन्हें शिक्षा प्राप्त करने की प्रेरणा दी जा सकती है।

(आ) समूचे ग्राम समाज में साक्षरता व निपुणता प्राप्त करने के वातावरण उत्पन्न करना होगा।

(इ) धन्धे का प्रशिक्षण प्रारम्भ से देना होगा।

(ई) अध्यापकों तथा छात्रों का ध्यान किताबी ज्ञान से हटाकर प्रत्यक्ष कार्य-अनुभव पर केन्द्रित करना होगा।

इन उद्देश्यों को सामने रखकर हमारी इन्स्टीट्यूट ग्रामीण युवकों में कर्म-नैपुण्य पैदा करने के लिए अनौपचारिक प्रशिक्षण की कार्यविधि विकसित करने का प्रयास कर रही है। इस कार्य की शुरूआत हमने औरंगाबाद के निकट ग्रामीण क्षेत्र में एक प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना करके की है। इस केन्द्र में अर्द्ध शिक्षित, निरक्षर व पढ़ाई छोड़कर भागे निर्धन ग्रामीण युवकों को विभिन्न काम धन्धों का अनौपचारिक प्रशिक्षण देकर समाज के उत्पादक सदस्यों की श्रेणी में लाने का प्रयास किया जाएगा। इसी के साथ हमने लंका से वापस लौटे हुए प्रवासी भारतीयों के आर्थिक व सामाजिक पुनर्वास के हेतु तमिलनाडु की सीमा के निकट आन्ध्र प्रदेश में सुलुरपेट नामक स्थान पर "प्रत्यावर्तियों व निर्धन ग्रामीणों के लिए एक प्रशिक्षण केंद्र की स्थापना की है। ऐसा ही तीसरा प्रशिक्षण केन्द्र पूना के निकट कार्य कर रहा है जिसमें भूमिहीन कृषकों को स्वयं रोजगार की दृष्टि से कुछ धन्धों का प्रशिक्षण दिया जाता है। □

cture

lic
ngers
s
ify.

# नीलोखेड़ी : सामुदायिक विकास योजना का प्रथम प्रयोग

□

राष्ट्र प्रकाश

□

नीलोखेड़ी, नाम सामने आते ही सहसा एक चित्र उभर-उभरकर मिट जाता है। नीलोखेड़ी अपने इतिहास का एक प्रस्थान बिन्दु है जहां से सामुदायिक विकास योजना का प्रारंभ हुआ था। जिन उज्ज्वल लक्ष्यों का चिन्तन यहां हुआ था वे आगे चलकर भटकाव की स्थिति में आ गये। समय-समय पर यह भटकाव खत्म भी होता है, तब लगता है कि इतिहास सही स्थिति में पहुंचकर कुछ कहना-करना चाहता है परन्तु सत्ता और समाज के कुछ घिनौने चरित्र से घिरकर जिस अबोलेपन से चुप्पी साध लेता है वहां हर संवेदनशील भारतीय के सामने प्रश्न-चिन्ह खड़ा हो जाता है। नीलोखेड़ी आज प्रश्न-चिन्ह के रूप में सामने खड़ा है। कहां है वह नीलोखेड़ी जहां से ब्लॉक की कल्पना पैदा हुई थी? जिसके माध्यम से ग्रामीण-विकास की बातें सोची गयी थीं, कहां है वह सोच? उन दिनों विदेश का कोई व्यक्ति भारत आता तो उसे नीलोखेड़ी के दर्शन जरूर कराए जाते थे — यहां के विकास-कार्यों के स्वरूप से उन्हें परिचित कराया जाता था। लेकिन अब? नीलोखेड़ी, एक आइना, जो खुद धूमिल हो गया है। शेष भारत का अक्स कितना गंदा नजर आएगा—नीलोखेड़ी के इतिहास से जाना जा सकता है।

१९४७ के भारत विभाजन के बाद काफी संख्या में शरणार्थी भारत आये। उनके भोजन, कपड़े और आवास की समस्या पैदा हुई। दिल्ली से सौ कि०मी० दूर कुरुक्षेत्र में टैन्टों की बाढ़ आ गयी थी। महात्मा गांधी और पं० नेहरू ने इसका निरीक्षण किया था।

एस० के० डे नामक इंजीनियर, जो शरणार्थी थे, ने समस्याओं के समाधान के लिए काफी सोच-विचार कर पं० नेहरू के सामने एक प्रारूप रखा, और उनके पुनर्वास की जिम्मेदारी ली। स्वयं श्री डे ने कहा कि—"मैंने अपने स्वप्न को साकार रूप देने के लिए लाखों शरणार्थियों के माध्यम से भारतीय समाज के एक नये कृषि उद्योग पर आधारित रचना का कार्य यहां शुरू किया जिसको सामुदायिक विकास का नाम मिला।" सबसे पहले कपड़ा उत्पादन की योजना बनी तथा तत्सम्बन्धी अन्य कई ट्रेनिंग सेन्टर खोले गए। श्रम की महत्ता को समझा गया,

FDS/T/23

श्रम का जो बहाव शहरों की ओर हो रहा था, उसे रोकने की कोशिश हुई।

इसी क्रम में कुरुक्षेत्र से पन्द्रह मील की दूरी पर "नीलोखेड़ी" का चयन किया गया जो पूरी तरह से जंगल था। बस्ती बसाने की रूपरेखा तैयार की गयी तथा शीघ्र ही पॉलिटेकनिक शुरू किया गया, जिसमें ईंट बनाने से लेकर खाने-पीने की बेकरी जैसे काम शुरू किए गए। अगले क्रम में मकान, सड़कें, पार्क बनाए गए। व्यावसायिक व यांत्रिक शिक्षा, केन्द्रों की स्थापना हुई। सभी उद्योगों में प्रगति दिखाई देने लगी। खेती के साथ-साथ दूध की डेयरी, मुर्गी-पालन, सुअर पालन व नर्सरी जैसे कार्यों को अपनाया गया।

इसके अलावा सामाजिक कल्याण और सांस्कृतिक गतिविधियों पर भी ध्यान दिया गया। नीलोखेड़ी की प्रगति से प्रसन्न होकर पं० नेहरू ने कहा था—"मैं दस हजार नीलोखेड़ी पूरे भारत में फैले हुए देखना चाहता हूं।" छोटे-छोटे उद्योगों को वहीं के मजदूरों के हाथों में सौंपा गया। छः एकड़ प्रति परिवार के हिसाब से कृषि-भूमि का वितरण किया गया, खेती-योग्य सारे सामान मुहैया किए गए।

१९५२ में पंचायत की कार्य-प्रणाली को व्यवस्थित किया गया। पंचायत के अंतर्गत ही विभिन्न कार्यों की देख-रेख के लिए उपसमितियों का गठन किया गया। हजारों नीलोखेड़ी बनाने के उद्देश्य से पूरे देश की दृष्टि से एक विस्तृत योजना तैयार की गयी, जिसका उद्देश्य गांव को आत्मनिर्भर बनाना था। पूरे देश को ब्लॉक स्तर पर विभाजित किया गया। ब्लॉक के अधिकारी को बी०डी० ओ० के नाम से जाना गया। पहले ब्लॉक के अधिकारी के पास दो-दो जिलों का क्षेत्र रखा गया, लेकिन बड़े होने के अनुमान से छोटे यूनिट, जिसमें सौ ग्राम होंगे, को ब्लॉक-रचना का आधार बनाया गया। पंचायती राज के अंतर्गत लोगों का सहभाग अधिक रहे इस दृष्टि से १९५७ में तीन-स्तरीय व्यवस्था लागू की गयी—जिला, ब्लॉक व ग्राम।

आगे के चरणों में सामुदायिक विकास का कार्य उलझा रहा। सभी वर्गों के विकास के स्थान पर वर्ग-विशेष को ही प्रोत्साहन मिला। गरीब और गरीब होते चले गए अमीर और अमीर। जहां इसका एक पक्ष असफलता के रूप में सामने आया वहीं इसके कुछ लाभ भी दिखाई दिए—अन्न का उत्पादन बढ़ा, गांव की व्यवस्था की दृष्टि से एक ढांचा सामने आया, आधुनिकीकरण के लाभ गांवों तक पहुंचे।

अब सभी के विकास के स्थान पर गरीब व पिछड़े लोगों को, जिनको अभी तक विकास योजनाओं का लाभ नहीं मिला है, लाभ पहुंचे इसके लिए अंत्योदय जैसी योजनाओं का स्वरूप सामने आया।

नीलोखेड़ी अलग से अब कोई महत्व नहीं रखता है। अन्य ब्लाकों की तरह यह भी एक ब्लॉक मात्र रह गया है। नीलोखेड़ी इतिहास की छांह में बैठा सूख-सा रहा है। कुछ समय पहले तक एक बोर्ड भी लगा हुआ था जिस पर लिखा था "मजदूर मंजिल" और भगवान शिव की नटराज प्रतिमा-मुद्रा में एक प्रतिमा भी उत्कीर्ण थी। आज वह बोर्ड भी नहीं है। लगता है समय की उड़ती हुई धूल के बीच ढंक गया या दम तोड़ गया। नीलोखेड़ी की पहचान बनाता हुआ खुद से बेपहचाना रह गया, या इतिहास को कहता-सुनता खुद गूंगा-बहरा हो गया।

अब नीलोखेड़ी का महत्व इस बात में है कि सामुदायिक विकास के इतिहास में नीलोखेड़ी सबसे पहली शुरुआत थी और नीलोखेड़ी का उदाहरण हमेशा दिया जाता रहेगा। इसी रूप में इसे याद रख सकेंगे। □

# जनशक्ति का क्रियात्मक योगदान आवश्यक

□

डा० एच० डब्ल्यू० बट्ट
निदेशक

□

**इण्डो डच प्रोजेक्ट फार चाइल्ड वेलफेयर**
स्थापना वर्ष : १९७०
कार्यक्षेत्र : चेवेला ब्लाक
(हैदराबाद जिला) आन्ध्र प्रदेश

१९५२ में ग्राम विकास कार्यक्रम का प्रारम्भ इस विश्वास से किया गया था कि ग्राम-जनों को यदि अपनी सहायता आप करने के लिए अवसर प्रदान किये गए तो अपनी प्रतिभा, उत्साह और क्षमता का उपयोग आत्म-विकास में भली भांति कर सकेंगे। कार्यक्रम का लक्ष्य और कार्य-विधियां मुख्यतया रवीन्द्रनाथ ठाकुर, महात्मा गांधी तथा अनेक अन्य देशी-विदेशी विशेषज्ञों द्वारा ग्राम विकास की समस्या को हल करने के लिए किए गए उनके प्रयत्नों और तत्सम्बन्धी अनुभवों पर ही आधारित रही हैं।

पूर्ववर्ती अनुभवों से यह स्पष्ट है कि ग्राम-जीवन के विभिन्न पहलू परस्पर इतने सम्बद्ध है कि बिना समन्वित प्रयास के किसी भी एक क्षेत्र में अलग से विकास सम्भव नहीं हो सकता। साथ ही यह भी उतना ही स्पष्ट है कि जब तक इस कार्यक्रम को अपना कार्यक्रम समझ कर इसमें सक्रिय योगदान नहीं करेंगे कोई भी उल्लेखनीय परिणाम प्राप्त होना सम्भव नहीं होगा।

सामुदायिक विकास ग्राम विकास और अब समन्वित ग्राम विकास की सभी योजनायें अपने आप में सुयोजित और सुगठित थी किन्तु असली कठिनाई तो उनके लागू करने के समय पर आई। असल में इनका लाभ जिन्हें मिलना चाहिये था उन्हें तो मिला नहीं, उलटे सुसम्पन्न और प्रभावशाली लोग ही वे समस्त सुविधायें हड़पते गए। अपनी उलझनों और पेचीदगियों के कारण असली जरूरतमन्द लोगों के चुनाव और फिर उनमें सुविधाओं, सही और समान वितरण, की दृष्टि से प्रखण्ड का वर्तमान ढांचा सर्वथा निष्प्रभावी सिद्ध हुआ है। साथ ही पुराने परम्परागत कार्यक्रम भी प्रशासन और ग्राम-स्तर के नेतृत्व पर जमे बैठे लोगों के विरोध और असहयोग के कारण अब अत्यन्त दुष्प्रभावित हो चुके हैं।

सामुदायिक विकास-कार्यक्रम की सीमित असफलता की कारण-मीमांसा करने पर भी यही दिखाई देगा कि यह सारा कार्यक्रम लोगों के योगदान और पहल के स्थान पर लगभग पूर्णतया सरकार द्वारा सरकारी ढंग से निर्धारित लक्ष्यों को सामने

रखकर ही चलाया जाता रहा और इस प्रकार समाज में उत्साह का संचार करने में सर्वथा असफल रहा और अब इस नए ग्राम विकास कार्यक्रम के हमारे अनुभव भी यही बताते हैं कि इसमें भी मूलभूत उद्देश्यों की सिद्धि कहीं नहीं हो सकी। सर्वोच्च स्तर और सम्बद्ध विभागीय स्तर में आपसी तालमेल की कमी ने इन सुनिर्मित योजनाओं को भी बुरी तरह प्रभावित कर दिया है। ऊपरी स्तर पर बनी इन योजनाओं में निचले स्तर के जन-समाज की क्षमताओं और आकांक्षाओं का कहीं विचार नहीं रखा गया।

ग्राम-विकास की दृष्टि से सर्वाधिक सहज और प्रभावी उपकरण हो सकती थीं — ग्राम स्तर पर पंचायतें और प्रखण्ड स्तर पर पंचायत समितियां। किन्तु पंचायतों के पास स्थानीय कर-संग्रह आदि का कोई अधिकार न होने से अपर्याप्त साधनों के कारण कुछ भी उल्लेखनीय कार्य करने में असमर्थ ही रहती है। जब तक किसी संस्था का आय का कोई अपना स्रोत—भले ही वह कितना ही छोटा हो, न हो तो वह परावलम्बी रहने के कारण सिकुड़ी-सिमटी अवस्था में ही रहेगी। हमारी पंचायतों का काम खाद्यान्न वितरण, श्रेष्ठतर सेवाओं और बीजों, खादों और सुधरे उपकरणों की व्यवस्थायें संगठित करने के अतिरिक्त और क्या रह गया है। इसके अतिरिक्त गुटबाजी और दलीय राजनीति जो कि हमारे सम्पूर्ण समाज का ही अंग बन चुकी है, इस पंचायत राज प्रणाली द्वारा ग्राम-सुधार के क्षेत्र में रही-सही आशाओं को ही समाप्त कर दिया है। जन सहयोग के अभाव का एक बड़ा कारण है—ऐसे कार्यक्रमों की योजना का अभाव जो गृहणियों के जीवन-सार को उठाने की दृष्टि से उपयोगी हो। इसी लिए ग्राम-विकास-कार्यक्रमों में ग्रामीण महिलाओं का अंशदान शून्य के बराबर ही रहता आया है।

इसलिए ऐसे किसी कार्यक्रम का संगठन आवश्यक है जिसमें सम्पूर्ण परिवार को ध्यान में रखा गया हो। परिवार के विकास में महिलाओं का अविभाज्य स्थान रहता ही है। खोजबीन से यह तथ्य प्रकट हुआ है कि ६० प्र० श० कृषि-कार्यों अथवा पशुपालन आदि में ग्रामीण महिलाओं का सक्रिय योगदान रहता है। इस स्थिति में उच्च-मध्य वर्ग की महिलाओं के एक छोटे से वर्ग द्वारा नियन्त्रित महिला-मंडल कोई बहुत बड़ा दिशा-दान का कार्य नहीं कर सकते। क्योंकि ऐसी महिलाओं की रुचि अधिकांशतः सिलाई, कढ़ाई आदि कार्यों में ही रहती है। इसीलिए प्रायः ग्रामीण महिलाएं इन महिला-मंडलों में बहुत कम रुचि लेती है। इस प्रकार ग्राम-विकास के कार्यों में इन महिला-मंडलों पर बहुत अधिक मात्रा में निर्भर नहीं रहा जा सकता।

इन परिस्थितियों में आन्ध्र प्रदेश के रंगा रेड्डी जिले के चेवेला ब्लाक में कुटुम्ब विकास केन्द्रों की स्थापना का एक अभिनव प्रयोग किया गया है। इसके सदस्यों में ८० प्रतिशत महिलायें और २० प्र० श० पुरुष होते हैं। ये केन्द्र सम्पूर्ण परिवार विशेषतः शिशु-कल्याण की दृष्टि से स्वास्थ्य, शिक्षा और पोषक आहार आदि कार्यक्रमों की संरचना में विशेष रुचि ले रहे हैं। प्रबन्ध कला का प्रशिक्षण प्राप्त कर महिलायें बालबाड़ी आदि के संचालन और ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यक्रमों का उत्तरदायित्व लेकर अग्रसर होती जा रही हैं।

इस सन्दर्भ में एक बात हमें समझ लेनी होगी कि 'भाग लेने" का अर्थ केवल सहभागी होना ही नहीं, निश्चित कार्य करना भी है। तभी ग्राम-विकास के कार्यक्रमों के अधिक प्रभावी होने की सम्भावना हो सकती है। जब तक कार्यक्रमों, उत्तरदायित्वों, छोटे मोटे खर्चों में भाग लेने और स्थानीय परिस्थितियों में सुधार लाने की दृष्टि से आयोजित स्थानीय कार्यों के निमित्त जन-शक्ति जुटाने एवं सम्पूर्ण परिवार विशेषतः महिलाओं तथा शिशु-वर्ग के पोषक आहार आदि की व्यवस्था करने आदि के रूप में ग्रामीण समाज का प्रत्यक्ष अंशदान सामने नहीं आता, इस दिशा में उठाया गया कोई भी पग, चलाया गया कोई भी कार्यक्रम लम्बे समय तक सफल रूप से जारी नहीं रह सकता। □